



मेट्रो चेतना

अंक - 28



मेट्रो रेलवे, कोलकाता

मनोज जोशी

महाप्रबंधक



महाप्रबंधक कार्यालय
मेट्रो रेल भवन,
33/1, जे. एल. नेहरू रोड,
कोलकाता 700 071.

संरक्षक की लेखनी से...



एक भाषा के रूप में हिंदी न सिर्फ भारत की पहचान है बल्कि यह विविधताओं से भरे इस देश की जीवन मूल्यों एवं संस्कृति की सच्ची संवाहक, संप्रेषक और परिचायक भी है। एक बेहद सरल, सहज और सुगम भाषा होने के कारण आज यह न केवल भारत की भाषा अपितु यह वैश्विक भाषा बनने की ओर भी अग्रसर है। आज विश्व के कई देशों में हिंदी बोली और समझी जाती है। यहां तक कि 'फिजी' में इसे राजभाषा होने का गौरव भी प्राप्त है। सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्मों ने हिंदी के उपयोग को और भी आसान और सुविधाजनक बना दिया है जिससे राजभाषा के प्रयोग-प्रसार को एक नया आयाम मिला है। अपने सहज सरल स्वरूप के कारण यह वाणिज्य एवं व्यापार की भाषा भी बन रही है। देश के विभिन्न प्रांतों के बीच संपर्क और संप्रेषण की भाषा के रूप में राजभाषा हिंदी का क्षेत्र व्यापक होता जा रहा है जो देश की एकता, अखंडता और समरसता के लिए हर्ष का विषय है।

'मेट्रो रेलवे, कोलकाता' राजभाषा के प्रति अपनी दायित्वों और कर्तव्यों के निर्वहन में सदैव प्रयात्नशील है। राजभाषा के क्रियान्वयन के लिए सरकार द्वारा निर्धारित कार्यक्रमों एवं मानकों के अनुरूप कार्यालय में राजभाषा संबंधी गतिविधियां संचालित की जाती हैं। विभागों के समेकित प्रयास से हम राजभाषा के क्षेत्र में निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप कार्यशील हैं। मुझे उम्मीद है कि अधिकारियों एवं कर्मचारियों के सहयोग से मेट्रो रेलवे में राजभाषा का प्रयोग - प्रसार आगे और भी बेहतर हो सकेगा।

मैं 'मेट्रो चेतना' के 28वें एवं नवीनतम अंक की सफलता के लिए संपादक मंडल, सभी रचनाकारों और सुधि पाठकजनों को हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ।

(मनोज जोशी)

संपादक की कलम से ...

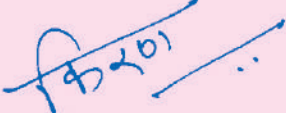


‘मेट्रो चेतना’ का 28वां एवं नवीनतम अंक पुनः आपके समक्ष है। हमारा यह सतत् प्रयास रहता है कि हमारे अधिकारी एवं कर्मचारी अपनी रचनाओं से पत्रिका को समृद्ध करते रहें। पत्रिका में प्रकाशित हिन्दीभाषी एवं अहिन्दीभाषी कर्मियों की रचनाएं इस बात की सूचक हैं कि यह पत्रिका अपने उद्देश्य में सफलता अर्जित कर रही है।

भाषा ही वह माध्यम है जिससे कोई भी समाज अपना ज्ञान, संस्कृति और संस्कार अपनी अगली पीढ़ी तक पहुँचाता है। इसी के मद्देनजर पत्रिका की रचनाओं में भाषा के रचनात्मक पक्ष और अभिव्यक्ति पर विशेष ध्यान दिया गया है।

हिन्दी साहित्य की सेवा से जुड़े कतिपय साहित्यकारों की कृति को “हिन्दी के हस्ताक्षर” और ‘विरासत’ के स्तंभों में प्रकाशित किया गया है। आशा है पत्रिका आपको भाएगी।

पत्रिका के कलेवर में निरंतर निखार के लिए आपकी प्रतिक्रिया और सुझावों का स्वागत है।


किरण बोस
(राजभाषा अधिकारी)

मेट्रो चेतना

अंक - 28

संरक्षक

मनोज जोशी

परामर्शदाता

शरद कुमार श्रीवास्तव
मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं
प्रधान मुख्य सिगनल एवं दूरसंचार इंजीनियर

प्रधान संपादक

दामोदर हेमब्रम
उप मुख्य राजभाषा अधिकारी एवं
उप मुख्य नेटवर्क प्रबंधक (याता.)

संपादक

किरण बोस
राजभाषा अधिकारी

सहयोगी

कीर्ति किरण बागे,
राजेश एक्का, मानसिंह मेलगंडी

सम्पर्क

राजभाषा अनुभाग
मेट्रो रेलवे
मेट्रो रेल भवन (नवम तल)
33/1, जवाहर लाल नेहरू रोड
कोलकाता - 700 071

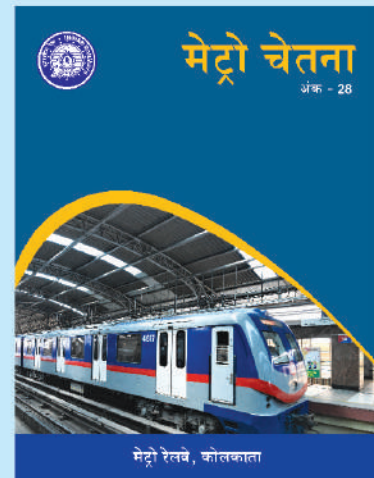
☎(020)-55735, 55037 (रेलवे)

☎(033)-225-55735, 225-55037 (पी. एंड टी.)

केवल निःशुल्क वितरण हेतु प्रकाशित पत्रिका। इसमें प्रकाशित
रचनाओं में व्यक्त विचार लेखक/रचनाकारों के अपने हैं।
संपादक मंडल इसके लिए जिम्मेवार नहीं है।

अनुक्रमणिका

■ सम्पादक की कलम से		1
■ मेट्रो समाचार		3-4, 35-36
■ अंतरिक्ष मलबा - पृथ्वी के बाह्य वातावरण में प्रदूषण की समस्या	डाँ० वरुण कुमार	5-7
■ मंजिलों पे जाऊँगा मैं (कविता)	किशोर कुमार विश्वकर्मा	7
■ सोरसे इलिश	रूपा भट्टाचार्य	8-9
■ यात्रा - एक संस्मरण	अशोक कुमार पाण्डेय	10
■ अनजान रिश्ते	राजेन्द्र त्यागी	11-14
■ चिट्ठी आई है	राजेश एक्का	15-16
■ कोरोना (कविता)	ऋषभ कुमार राम	16
■ दर्शन, मन्नत और दक्षिणा	रंजीत कुमार सिन्हा	17
■ उधर मत जाना	पेड्डा ममता राव	18
■ जीवन में गुरु का योगदान	तिस्ता पाइक	19-20
■ कंप्यूटर का विस्तार	मानसिंह मेलगंडी	21-22
■ कामाख्या धाम	अमिताभ पाण्डेय	23
■ गांव में बीमारी	मुन्ना सिंह	24
■ देशों की सीमा रेखा	ऋत्विक् सिन्हा	25-26
■ शक्तिपात	विमल किशोर मिश्र	27-28
■ अवसर	किशोरी प्रसाद चौरसिया	29
■ कोविड-19 : क्या करें और क्या न करें?		30
■ सत्यजीत राय - एक अध्ययन	किरण बोस	31-34



मेट्रो समाचार

महाप्रबंधक, मेट्रो रेलवे का पूर्व-पश्चिम मेट्रो परियोजना के हावड़ा मैदान से एस्पलानेड विस्तार खंड का विस्तृत निरीक्षण

महाप्रबंधक, मेट्रो रेलवे, श्री मनोज जोशी ने 09.09.2021 को पूर्व-पश्चिम मेट्रो कॉरिडोर के हावड़ा मैदान से एस्पलानेड तक के खंड का विस्तृत निरीक्षण किया। उन्होंने मेट्रो रेलवे और कोलकाता मेट्रो रेलवे कॉर्पोरेशन (KMRCL) के वरिष्ठ अधिकारियों के साथ हावड़ा मैदान मेट्रो स्टेशन से अपना निरीक्षण शुरू किया। निरीक्षण के दौरान उन्होंने सुरंग खंड चौराहे के निर्माण की प्रगति के साथ-साथ भूमिगत स्टेशनों, ट्रेक्शन सब-स्टेशनों, बिजली आपूर्ति प्रणालियों, वेंटिलेशन और एयर कंडीशनिंग सिस्टम, प्लेटफॉर्म स्क्रीन दरवाजे और अन्य उप प्रणालियों के कार्यों की प्रगति का निरीक्षण किया। महाप्रबंधक ने हावड़ा मैदान, हावड़ा, महाकरण और ईस्ट-वेस्ट मेट्रो के एस्पलानेड स्टेशनों के साथ-साथ स्टेशनों में प्रवेश और निकास और हावड़ा तथा एस्पलानेड स्टेशनों पर यात्रियों के इंटरचेंज

(अंतर्परिवर्तन) योजना का भी निरीक्षण किया एवं कार्य की प्रगति पर संतोष व्यक्त किया। उन्होंने उच्चाधिकारियों को लंबित कार्यों को समय सीमा के भीतर पूरा करने की निर्देश भी दिया।



महाप्रबंधक, मेट्रो रेलवे का जोका-एस्पलानेड मेट्रो परियोजना के जोका-माझेरहाट खंड का विस्तृत निरीक्षण



महाप्रबंधक, मेट्रो रेलवे, श्री मनोज जोशी ने 31.08.2021 को जोका-एस्पलानेड मेट्रो परियोजना के जोका-माझेरहाट खंड का विस्तृत निरीक्षण किया। उन्होंने जोका डिपो से अपना निरीक्षण शुरू किया, जो बेहतरीन और आधुनिक डिपो में से एक होगा।

महाप्रबंधक ने जोका डिपो में एक लॉकगेट का उद्घाटन किया और इस स्थल पर वृक्षारोपण भी किया। उन्होंने मेट्रो रेलवे और रेल विकास निगम लिमिटेड (आरवीएनएल) के सभी वरिष्ठ अधिकारियों के साथ जोका डिपो से तारातला स्टेशन तक ट्रॉली निरीक्षण किया और निर्माणाधीन जोका, साखेरबाजार, ठाकुरपुकुर, बेहला चौरास्ता और तारातला स्टेशनों का निरीक्षण किया। जोका और बेहला चौरास्ता स्टेशनों का काम अंतिम चरण पर हैं और यहां सभी आधुनिक यात्री सुविधाएं उपलब्ध कराई जा रही हैं। इन स्टेशनों को भित्ति चित्रों और अन्य कलात्मक वस्तुओं से सजाया जा रहा है। महाप्रबंधक ने माझेरहाट-मोमिनपुर-एस्पलानेड मेट्रो कार्य की भी समीक्षा की। उन्होंने कार्य के प्रगति पर संतोष व्यक्त किया एवं शेष कार्यों को समय सीमा के भीतर पूरा करने का निर्देश दिया।



मेट्रो चेतना

मेट्रो रेलवे के 37वें स्थापना दिवस पर नॉन-एसी रेक को विदाई दी गई

कोलकाता मेट्रो के नॉन-एसी रेक बीते दिनों की बात हो गए हैं। मेट्रो रेलवे ने महानायक उत्तम कुमार स्टेशन पर आयोजित अपने 37वें स्थापना दिवस कार्यक्रम में 24.10.2021 को अपने नॉन-एसी रेक को विदाई दी है। महाप्रबंधक श्री मनोज जोशी ने संगठन के प्रमुख के रूप में पिछले दो वर्षों के अपने अनुभव साझा किए। उन्होंने संतोष व्यक्त करते हुए कहा कि कर्मचारियों और अधिकारियों की कड़ी मेहनत और समर्पण के साथ मेट्रो रेलवे ने सभी कोविड प्रोटोकॉल का पालन करते हुए इन चुनौतीपूर्ण वर्षों के दौरान सफलतापूर्वक सुचारु सेवाएं प्रदान की हैं। यह घोषणा



करते हुए कि मेट्रो अब केवल एसी सेवाएं प्रदान करेगी, उन्होंने कहा कि कोविड के समय में भी शहर में सभी चल रही मेट्रो परियोजनाएं बेरोकटोक जारी रहीं और महत्वपूर्ण प्रगति हासिल की गई है। उन्होंने उम्मीद जताई है कि सियालदह मेट्रो स्टेशन और साल्ट लेक सेक्टर V से हावड़ा मैदान तक ईस्ट-वेस्ट मेट्रो एक साल के भीतर चालू हो जाएगी। तीन अन्य मेट्रो परियोजनाओं यानी नोआपाड़ा से विमानबंदर, कवि सुभाष से साल्ट लेक सेक्टर-V और जोका से माझेरहाट का पहला चरण अगले 2 वर्षों में पूरा हो जाएगा।

इस कार्यक्रम में भारत के पहली मेट्रो के यात्री श्री गौतम सेनगुप्ता, श्री पी के दासगुप्ता और श्री शांतनु बनर्जी ने अपने मेट्रो की सुखद यात्रा के अनुभवों को साझा किया। बाद में, श्री मनोज जोशी ने नॉन-एसी मेट्रो रेक (रेक नंबर - एन 12/14) के अंदर मेट्रो रेलवे के अतीत, वर्तमान और भविष्य पर एक प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। इस प्रदर्शनी में देश की पहली मेट्रो के गौरवशाली अतीत, वर्तमान परिदृश्य और इसकी भविष्य की परियोजनाओं को रंगीन और दुर्लभ पोस्टरों की मदद से चित्रित किया गया है। शाम को इस नॉन-एसी रेक को नोआपाड़ा कारशेड के लिए रवाना किया गया। महाप्रबंधक तथा अन्य अधिकारियों और मीडियाकर्मियों ने कोलकाता मेट्रो की अंतिम नॉन-एसी कोच का आनंद लिया।



मेट्रो रेलवे के अतीत, वर्तमान और भविष्य पर प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए महा प्रबंधक श्री मनोज जोशी



बिमानबंदर स्टेशन पर निचले स्लैब की ढलाई का कार्य पूर्ण हुआ



कोविड महामारी के कारण लगाए गए वर्तमान प्रतिबंध के दौरान भी शहर में सभी मेट्रो परियोजनाओं का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। 29.08.2021 को बिमानबंदर मेट्रो के रास्ते नोआपाड़ा - बारासात मेट्रो परियोजना में एक महत्वपूर्ण प्रगति हासिल की गई जब 64 मीटर लंबी आरसीसी बॉक्स सुरंग के निचले स्लैब का कास्टिंग कार्य पूरा किया गया। इस कार्य के लिए अति व्यस्त वीआईपी रोड और एयरपोर्ट एंट्री रोड के नीचे 632 क्यूबिक मीटर कंक्रीट डाली गई। यह एक बहुत ही चुनौतीपूर्ण काम था क्योंकि कुछ डायवर्जन को छोड़कर, इस काम के दौरान इन दो अति व्यस्त सड़कों पर यातायात की आवाजाही बाधित नहीं हुई थी। यह कास्टिंग (ढलाई) कार्य 27.08.2021 को 16.50 बजे शुरू किया गया था और इसे 29.08.2021 को 00.53 बजे पूरा कर लिया गया।

अंतरिक्ष मलबा - पृथ्वी के बाह्य वातावरण में प्रदूषण की समस्या

(11 मई 2020 को एक चीनी रॉकेट जिसका वजन 18000 किलोग्राम से अधिक था अटलांटिक महासागर में गिर गया। उन-5इ ठ/इ' नामक यह रॉकेट पाँच मई को दक्षिण चीन के हैनन प्रांत के वेनचेंग प्रक्षेपण केंद्र से छोड़ा गया था। यह उपग्रह कई दिन पृथ्वी की कक्षा में बिताकर वापस पृथ्वी के वातावरण में प्रवेश कर रहा था। आशंका है कि वापसी में यह अंतरिक्ष में स्थित किसी मलबे से टकराकर क्षतिग्रस्त हो गया और नियंत्रण खो बैठा। इसके टुकड़े टुकड़े हो गए। महासागर में गिरने से पहले यह लॉस एंजलीस और सेंट्रल पार्क के ऊपर से गुजरा। अगर यह यह भारी भरकम मलबा शहर के ऊपर गिरता तो क्या तबाही होती इसकी कल्पना ही रोंगटे खड़े कर देती है। इस घटना के साथ ही विश्व समुदाय में अंतरिक्ष मलबे के खतरे पर नए सिरे से चिंताएं बढ़ गई हैं।



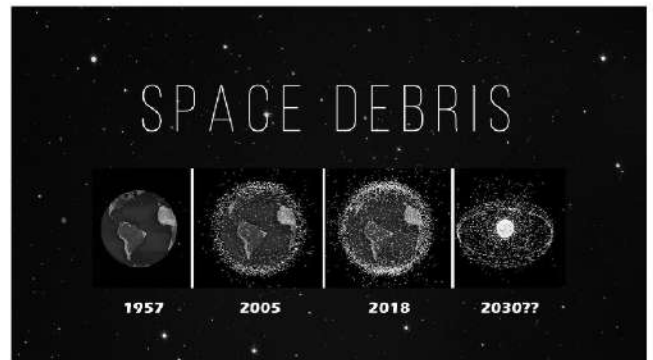
इस तरह की घटनाएँ पहले भी घटी हैं - स्काइलैब, (1979), सैल्यूट-7 (1991) और स्पेस शटल कोलम्बिया (2003) की हुई थीं। कोलंबिया स्पेस शटल के हादसे में उसमें सवार सभी अंतरिक्ष यात्रियों की मृत्यु हो गई थी। उसके भी अंतरिक्ष मलबे से टकराने की ही आशंका व्यक्त की गई थी।)

हमें लगता है कि पृथ्वी का वातावरण खाली है, लेकिन ऐसा नहीं है। पृथ्वी के वायुमंडल के ऊपर उल्कापिंड, सौर पवन, प्लाज्मा और कॉस्मिक किरणों के अलावा, अंतरिक्ष में हजारों टन मानव-निर्मित कचरा पृथ्वी का चक्कर काट रहा है। यह कचरा बेकार हो चुके उपग्रहों, रॉकेटों और अवशेषों के टुकड़ों का है और मनुष्य के अंतरिक्ष अभियानों के लिए बहुत बड़ा खतरा उपस्थित करने लगा है। उल्कापिंड और अंतरिक्ष मलबा दोनों ही अंतरिक्ष यान और अंतरिक्ष यात्रियों के लिए गंभीर खतरा पैदा करते हैं। ज्यादातर उल्कापिंड एक मिलीमीटर के दशांश से भी छोटे धूल के कण हैं।

अभी 600 से अधिक सक्रिय उपग्रह पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं। ये संचार, दूर संवेदन (रिमोट सेंसिंग), भूमि सर्वेक्षण, राष्ट्रीय सुरक्षा, नेविगेशन और वैज्ञानिक अभियानों के लिए अंतरिक्ष में छोड़े गए हैं। ये उपग्रह धरती से अधिकतम और न्यूनतम दूरी के एक दायरे के अंदर ही स्थापित किये गए हैं जिसके अंदर ये अपनी

कक्षाओं (orbit) में धरती का चक्कर लगाते हैं। जिन कक्षाओं में उपग्रह की गति इतनी होती है कि वह अपनी कक्षा में घूमता हुआ धरती के एक खास इलाके के ऊपर स्थिर रहे उन्हें भू-स्थिर या भू-समकालिक (जियो सिंक्रोनस) कक्षाएँ कहा जाता है। ज्यादातर उपग्रह इन भूस्थिर कक्षाओं में ही हैं। इससे नीचे, यानी धरती से समीपतर कक्षाओं को निम्न पृथ्वी कक्षा (ड्राइ) कहते हैं। अंतरिक्ष का अधिकांश मलबा इन्हीं दो क्षेत्रों में स्थित है। पृथ्वी से छोड़े गए उपग्रह अपना काम समाप्त करके निष्क्रिय होने के बाद भी न्यूटन के गति के प्रथम सिद्धांत के अनुसार कक्षा में बने रहते हैं और धरती का चक्कर लगाते रहते हैं। ये सक्रिय उपग्रहों और भावी अंतरिक्ष अभियानों के लिए खतरा बन जाते हैं। इनसे परावर्तित होने वाला प्रकाश खगोलीय वस्तुओं की इमेजिंग में भी प्रकाश प्रदूषण उत्पन्न करता है।

अंतरिक्ष मलबे से जुड़ी मुख्य समस्याओं में से एक इसकी अवधि, या जीवनकाल है। सौरमंडल में छोटे-बड़े उल्का पिंड भी चक्कर लगाते हैं लेकिन वे या तो पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करने पर घर्षण से जल जाते हैं या अपनी अंडाकार कक्षाओं में चक्कर लगाते हुए पृथ्वी के बगल से गुजरकर दूर चले जाते हैं। लेकिन जो पृथ्वी की कक्षा में ही रह जाते हैं वे वहाँ लाखों वर्षों तक बने रह सकते हैं। वायुमंडल न होने के कारण ये सड़कर नष्ट भी नहीं होते। इन्हें कैसे हटाया या नष्ट किया जाए, धरती से



मेट्रो चेतना

प्रक्षेपित होनेवाले उपग्रहों व अंतरिक्ष यानों से इनके टकराव को कैसे टाला जाए, इस बारे में वैज्ञानिकों में बड़ी चिंता है।

1970 के दशक की शुरुआत में नासा ने पृथ्वी के वायुमंडल में अंतरिक्ष कबाड़ को कम या खत्म करने की व्यवहार्यता पर काम शुरू किया था। एक योजना थी कि एक उच्च शक्ति वाली लेजर किरण से मलबे के टुकड़ों पर 'प्रहार' किया जाए। लेजर के प्रहार से उसकी बाहरी परत वाष्पीकृत हो जाएगी और लेजर से लगनेवाला बल उन्हें उनकी कक्षाओं को विक्षेपित कर देगा। इसे 'ओरियन परियोजना' के नाम से जाना जाता है। लेकिन इसमें लेजर द्वारा आवश्यक उच्च शक्ति और जमीन से अत्यधिक दूरी पर छोटी वस्तुओं में ऊर्जा को केंद्रित करने के लिए बहुत अधिक लागत आती। इसलिए इसे छोड़ दिया गया।

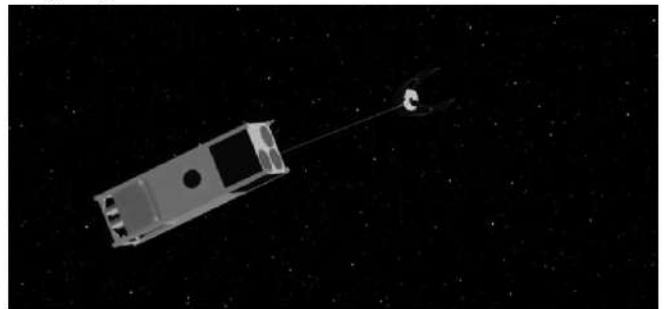
वर्तमान में लगभग 50 परमाणु उपकरण पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं और उनमें कुल लगभग 1,300 किलोग्राम (1.3 टन) रेडियोधर्मी पदार्थ है। इनमें से यदि कोई पृथ्वी के वायुमंडल में पुनः प्रविष्ट हुआ तो उससे न केवल जमीन पर गिरकर नुकसान पहुंचाने का खतरा होगा, बल्कि टकराव के बाद रेडियोधर्मी सामग्री के जमीन और वातावरण में फैल जाने का खतरा भी होगा। अंतरिक्ष से दो परमाणु दुर्घटनाएं पहले हो चुकी हैं। 1964 में, एक अमेरिकी उपग्रह पृथ्वी के वायुमंडल में नष्ट हुआ था जिससे हिंद महासागर के ऊपर रेडियोधर्मी विकिरण फैल गया था। 1978 में, एक सोवियत उपग्रह अपनी कक्षा से भटककर उत्तरी कनाडा के ऊपर गिरा था। इसमें 30 किलो से अधिक (66.1 पाउंड) समृद्ध यूरेनियम था। यूरेनियम परमाणु रिएक्टर अंतरिक्ष अभियानों में बहुत लोकप्रिय थे क्योंकि वे बहुत कम मात्रा में काफी ऊर्जा प्रदान करते हैं। 1988 में अंतरिक्ष में परमाणु ऊर्जा पर अंतरराष्ट्रीय प्रतिबंध की संधि के बाद उपग्रहों में परमाणु रिएक्टरों को शामिल करना बंद हो गया।

अंतरिक्ष मलबे में धूल के कण जैसे छोटे छोटे अनगिनत उल्कापिंड हैं और यही सबसे घने रूप में फैले हैं। सबसे ज्यादा खतरा इन्हीं से होता है। बड़े आकार के टुकड़ों (4 से 10 सेमी तक

के आकार के) की तो जमीन से टैकिंग हो जाती है और जमीन से नियंत्रण द्वारा उनसे टकराव की रोकथाम की जा सकती है। छोटे टुकड़ों को टैक नहीं किया जा सकता। अंतरिक्ष यान की ढाल को इन्हीं के संभावित टक्करों का सामना करने के लिए डिजाइन करना पड़ता है। कोई उल्कापिंड जब किसी यान या ग्रह से टकराता है तो वह अंशतः या पूर्णतः वाष्पित हो जाता है। अंतरिक्ष यान पर बाहरी सामग्री के वाष्पीकरण के परिणामस्वरूप इलेक्ट्रॉनों और आयनों का प्लाज्मा उत्पन्न होता है जिनसे उच्च विद्युत धाराएं उत्पन्न होती हैं और यान या उपग्रह के मूल नियंत्रण कार्यों में हस्तक्षेप करती हैं। इसी

कारण उपग्रह या यान आदि अनियंत्रित हो जाते हैं।

बड़े टुकड़ों की टैकिंग के लिए राडार और दूरबीनों का सहारा लिया जाता है। जो टुकड़े निम्न पृथ्वी कक्षा (LEO) में स्थित होते हैं उनकी टैकिंग जमीन आधारित राडार से जबकि भू-स्थिर कक्षा (GEO) में स्थित टुकड़ों की दूरबीनों से की जाती है। ये दूरबीनें जमीन पर और अंतरिक्ष दोनों जगहों में होती हैं। राडार से टैकिंग पर मौसम और दिन-रात की स्थितियों का प्रभाव नहीं पड़ता, लेकिन अपने संकीर्ण बैंडविड्थ के कारण वे ज्यादा दूर की छोटी वस्तुओं का पता नहीं लगा पाते। दूरबीनों के माध्यम से अंतरिक्ष मलबे की ऑप्टिकल टैकिंग के लिए वस्तुओं को अंधेरे आकाश के खिलाफ सूर्य के प्रकाश से रोशन करने की आवश्यकता होती है। अंतरिक्ष तकनीक से संपन्न देश इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, जापान, रूस, स्पेन और संयुक्त राज्य अमेरिका उपर्युक्त टैकिंग का कार्य कर रहे हैं और अंतरिक्ष मलबे की साफ-



सफाई के लिए विभिन्न तरीके आजमा रहे हैं। इस साल जापान और अमेरिका के सहयोग से बीस मार्च को कजाखस्तान से एक व्यापारिक मिशन के तहत एल्सा-डी छोड़ा गया है। यह एक छोटा सा रॉकेट है जो निम्न भू-कक्षा में स्थित किसी बेकार उपग्रह को खोजकर उससे चिपककर उसे धरती के वातावरण में ठेल देगा, जहाँ वह वायुमंडल के घर्षण से जलकर समाप्त हो जाएगा। इसी तरह न्यूयॉर्क अमेरिका के रेन्सेलर पॉलीटेक्नीक इंस्टीच्यूट द्वारा एक 'ऑस्कर (OSCoR)' नाम की परियोजना पर काम चल रहा है, जिसमें एक चौकोर उपग्रह जाल और दंतुओं की सहायता से मलबे के टुकड़ों को पकड़कर अपने में इकट्ठा करेगा।

समय के साथ अंतरिक्ष मलबे में बढ़ोतरी को कम करने की दिशा में काफी प्रगति हुई है। अंतरिक्ष यान अब लंबे समय तक चलने वाले पेंट से ढँके हुए हैं और उनके सुरक्षात्मक आवरण छोटे उत्कापिण्डों, कण बमबारी और अल्ट्रावायलेट विकिरण द्वारा क्षरण से बहुत कम प्रभावित होते हैं। नए उपग्रह तेजी से छोटे होते जा रहे हैं। इससे भी उनके टकराव की संभावना कम हो रही है। वस्तु जितनी छोटी होती है, उससे टकराव की संभावना उतनी ही कम होती है। अंतरिक्ष का मलबा साफ करने के लिए कुछ परियोजनाओं पर ही काम चल रहा है।

ओरियन का विचार अभी भी भविष्य के लिए काम कर सकता है, जब तकनीक उपग्रहों को उच्च शक्ति वाले लेजर से लैस करने में सक्षम हो जाएगी। तब अंतरिक्ष मलबे को पृथ्वी के वातावरण में प्रवेश से पहले अंतरिक्ष में ही नष्ट करना संभव हो जाएगा।

डॉ० वरुण कुमार
निदेशक (राजभाषा)
गृह मंत्रालय, नई दिल्ली

मंजिलों पे जाऊँगा मैं

मंजिलों पे जाऊँगा मैं,
रुकेगी साँस हर घड़ी,
रुकेगी बात हर घड़ी,
पर हार न पाऊँगा मैं,
मंजिलों पे जाऊँगा मैं...

चाहे रास्तों का जाल हो,
अंधेरा फलक के पार हो,
न और कोई भी साथ हो,
तुफानों को हमसफ़र बनाऊँगा मैं,
पर मंजिलों पे जाऊँगा मैं...

न शोर आता अब मुझे,
न भोर आता अब मुझे,
तन्हाईया न अब मुझको सताती,
मेरे साथ ये भी हैं गुनगुनाती,
अपनी मंजिलों को पाऊँगा मैं

कब तक जिन्दगी को मौत की तरह जीये,
इस शरीर में दूसरे की रूह क्यों सहे,
बहुत देर से सोये हैं ताबूत मैं ये ग़ालिब
अब खुद इसको जलाऊँगा मैं,
अपनी मंजिलों को पाऊँगा मैं.....

- किशोर कुमार विश्वकर्मा,
उप मु.बि.इं./दक्षिण

प्रतिक्रिया

राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित गृह पत्रिका का 27वां अंक पढ़ा, पत्रिका का कलेवर और रचना संग्रहण की सुंदर प्रस्तुति। संरक्षक के भाव कि 'हिंदी सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम है और भारतीय रेल इस संस्कृति को परिवर्द्धित और परिपुष्ट करने का माध्यम है' राजभाषा के प्रति उनके प्रेम को दर्शाता है।

प्रधान मुख्य सिगनल एवं दूरसंचार अधिकारी द्वारा प्रस्तुत लेख 'ईस्ट-वेस्ट मेट्रो में अत्याधुनिक सिगनल और दूरसंचार प्रणाली' सीबीटीसी सिगनल प्रणाली तंत्र के विभिन्न पहलुओं पर समग्र एवं सारगर्भित सूचना देता है।

मेट्रो समचार का पन्ना रुचिपूर्ण एवं रचनाएं पठनीय व आकर्षक हैं। संपादक टीम को बेहतर प्रकाशन के लिए बधाई।

शुभाशीष भट्टाचार्य
उप मुख्य परिचालन प्रबंधक/ओ.एंड एम.

सोरसे इलिश

अरे शीला, सिलौटे की घटड़-पटड़ की आवाज कम कर, इतनी जोर से सरसों पीसने की आवाज से मुझे टी.वी. देखने में दिक्कत हो रही है...

मासी मां तो मिक्सी में क्यों नहीं पीस लेती? भन्नाते हुए शीला बोली।

सिलौटे में पिसी हुई सरसों से ही तो 'सोरसे इलिश' का असली स्वाद आता है। सुन, तू मसाला पीस कर चली जा, इलिश माछ मैं खुद पका लूँगी। इतनी महंगी मछली तू अच्छे से पका नहीं पायेगी।

अच्छा मासी मां, कितने में आप मछली लायी हो?

पूरे दो हजार रुपये किलो। दाम बताते हुए मासी मां का चेहरा गर्व से भर उठा था।

कुछ मायूसी भरे अंदाज में शीला बुदबुदायी, हां, हमारे भाग्य में इलिश कहां! कितने साल हो गये इलिश माछ खाये हुए।

जिस वर्ष मासी मां के घर काम में लगी थी, उसी वर्ष छोटे भइया की शादी में इलिश का स्वाद चखा था। वर्षों पहले खाया हुआ मछली का स्वाद मानो अभी भी मुँह से लगा हुआ था।

फिर तो सालों गुजर गये, मासी मां प्रत्येक बरसात में अपनी पसंदानुसार सोरसे इलिश, भापा इलिश और दही इलिश बनाती।

मगर इलिश का गंध छोड़कर कभी भी एक टुकड़ा शीला के मुँह तक नहीं गया, और मासी मां ने कभी पूछा भी नहीं। वैसे पूछती भी क्यों? दो हजार रुपये किलो इलिश गरीब के भाग्य में थोड़े ही जुटता है।

कल तो उसकी पहली 'जमाई घोड़ी' है। काश अपने इकलौते जमाई को 'इलिश' परोस पाती।

मासी मां भी तो अपने जमाई राजा के लिए विभिन्न पकवान बनाती है। मासी मां आप जमाई बाबू के लिए क्या-क्या बनाने जा रही हो?

अरे शीला, अब तो उम्र हो गई है, कमर दर्द से भी परेशान रहती हूँ, ज्यादा कुछ नहीं बनाऊँगी, वही गरम भात के साथ मूँग की दाल, मछली की मुड़ी की सब्जी, कसा हुआ मटन चाप,

चटनी, पापड़, रसगुल्ले और हाँ इन सबमें सबसेखास रहेगा 'सरसो इलिश' बस।

मासी मां, हाथ धोकर अपने आंचल में हाथों को पोछती हुई शीला ने सर झुका कर कहा "कल जमाई घोड़ी है, कुछ रुपये उधार दोगी?"

कितने चाहिए? मासी मां का स्वर कुछ रूखा सा था।

दो हजार रुपये।

हा... हा... हा... मासी मां ठठा के हंस पड़ी। इतने रुपयों का क्या करोगी?

'इलिशमाछ' शीला ने सपाट स्वर में उत्तर दिया।

पागल हो गई हो, जितनी चादर, उतनी ही पैर फैलाओ।

जमाई को ज्यादा सर न चढ़ाओ। चली है इलिश खिलाने, ये तुम लोगों के खरीदने लायक मछली नहीं है। तुम्हारी एक महीने की पगार ही तो दो हजार रुपये हैं, उसे एक दिन में उड़ा दोगी? और भी क्या-क्या बोल गई मासी मां...

शीला चुपचाप सुनती रही, फिर बिना कुछ बोले वहां से निकल गई।

भारी कदमों से घर की ओर जाते हुए सोचने लगी- शायद मासी मां ने ठीक ही कहा है, इलिश हम भग्यहीनों के नसीब में नहीं।

दरअसल 'जहां उम्मीद नहीं होती वहां तकलीफ की कोई गुंजाइश भी नहीं होती'।

मगर वह उधारी तो दे ही सकती थी, कंजूस कहीं की...। शीला की आंखों में आंसू थे।

रात में शीला इधर-उधर छुपाये हुए कुछ नोटों को मिलाकर देखा, मगर पंद्रह सौ से ज्यादा न थे।

सुबह एक छोटी सी हसरत दिल में लिए शीला बाजार पहुँची। कुछ फल-मिठाई लेकर मछली बाजार के सामने उसके पैर अनायास रुक गये।

अन्य दिनों की तरह माखन टोकरी में मछली सजाए बैठा था।



मेट्रो चेतना



हाँ दीदी। कौन वाला इलिश चाहिए?

रजत वर्णा इलिश धूप और पानी के बीच चाँदी सी बनी लग रही थी। शीला की आंखें चकमक करती हुई ढेरों इलिश देख कर चुंधिया गई।

क्या इन बेशकीमती मछली के दाम पूछूँ? भैया कैसे दोगे?

दीदी जमाई घोड़ी के लिए पच्चीस सौ रुपये किलो चल रहा है, मगर तुम पहली ग्राहक हो, तुम्हें दो हजार में दे दूँगा।

ओह, भैयाजी इलिश काटकर आधा किलो दे सकते हो। जमाई के लिए पहली बार पकाऊँगी।

जब जेब में पैसा नहीं है तो इलिश की तरफ देखो ही मत। बगल में 'तेलापिया माछ' ले लो बहुत ताजा है, माखन ने दो टूक सुना दिया। न जाने कहां-कहां से चले आते हैं... माखन बुदबुदाया।

एक उम्रदराज ग्राहक जो सब कुछ बड़े गौर से देख रहा था, माखन उनकी ओर मुखातिब होकर बोला, हां जेठु, कितने किलो दूँ?

माखन, तुम तो जानते ही हो, घर में ज्यादा खाने वाला नहीं है। वही एक किलो तक का एक मछली दे दो।

तुम्हारी जेठिमा का जन्मदिन है, और वह इलिश छोड़कर दूसरी मछली पसंद नहीं करती है। इसलिए ले जाता हूँ वरन इतनी महंगी मछली मैं भी नहीं खरीदता।

थैला नीचे रखकर जेब से पैसे निकालते हुए उन्होंने कनखियों से शीला की ओर देखा जो आधा किलो 'तेलापिया मछली' तौलने को कह रही थी।

जल्दी-जल्दी घर की ओर कदम बढ़ाते हुए शीला सोच रही थी, बेटी-जमाई आने ही वाले होंगे, इसी को अच्छे से पकाऊँगी। मछली तो मछली ही होती है चाहे वह तेलापिया हो या ...।

घर पहुँचकर शीला ने जैसे ही थैले को खोला, धक से रह गई।

थैले में चमकता हुआ गोटा इलिश था।

शीला के हाथ-पैर में सिहरन होने लगी, हे भगवान, लगता है थैली बदल गई। शायद मां षष्ठी ने ये करिश्मा किया है। मगर वह पेशो-पेस में पड़ गई। जब वह साहब घर जाकर थैले में तेलापिया पायेंगे तो वह जरूर उसे चोर समझेंगे।

नहीं-नहीं, शीला हड़बड़ाती हुई उल्टे पांव बाजार की ओर दौड़ी।

भैयाजी, हांफते हुए शीला बोली, देखिये बहुत गड़बड़ हो गई, पता नहीं थैली कैसे बदल गई। वह साहब जिन्होंने इलिश खरीदा था वह भी अभी आते ही होंगे, उन्हें ये लौटा दीजिएगा।

सुनो दीदी, घबराओ मत। शांत हो जाओ। माखन ने थैला शीला को लौटाते हुए कहा।

दरअसल थैला तो जेठू ने खुद बदला था, मैंने उन्हें थैली बदलते हुए देखा था।

क्या मतलब? मगर क्यों? शीला अवाक थी। इतने शौक से उन्होंने अपनी पत्नी की जन्मदिन के लिए इलिश खरीदा...

कौन पत्नी? किसकी पत्नी? जेठिमा? जेठिमा के मरे हुए पांच साल हो गये हैं। जेठू अपनी पत्नी से बहुत प्यार करते थे। हर साल जेठिमा के जन्मदिन पर मुझसे इलिश खरीद कर खुद पकाते, फिर सबको बांट देते। लगता है तुम्हारी बातें सुनकर उनका दिल पसीज गया होगा और उन्होंने जान-बुझकर मछली की थैली बदल दी।

अब घर जाओ और खुशी-खुशी इलिश पकाओ। यह इलिश तुम्हारे लिए ही है।

घर लौटते हुए शीला के पैर जमीन पर नहीं पड़ रहे थे, वह तो अपने ख्वाबों के आसमान में उड़ रही थी, उसकी छोटी सी हसरत जो पूरी हो गयी थी कुछ सोचती हुई वह मुस्करा पड़ती है, और थैली को अपने सीने से लगा लेती है।

घर का ताला खोलते हुए देखकर पड़ोसन पूछ बैठती है - शीला दीदी बहुत खुश नजर आ रही हो।

हां रे - मेरी दिन की शुरुआत, मेरी जीवन की सौगात, मेरी दिल की मुराद, एक इलिश ने पूरी कर दी। कहकर शीला खिलखिला उठी।

कुछ न समझते हुए पड़ोसन ने फिर पुछा, शीला मासी, नोटुन जमाई को क्या खिला रही हो?

गर्व से सर उठाते हुए शीला कहती है ... 'सोरसे इलिश'।

-रूपा भट्टाचार्य

यात्रा - एक संस्मरण



संपूर्ण लॉक डाउन से कुछ पाबंदियों को हटाये जाने के बाद मित्र मंडली की एक बैठक मेरे घर पर आयोजित हुई। बातों ही बातों में यह तय कर लिया गया कि अगला रविवार भ्रमण के नाम समर्पित किया जाएगा।

कुछ लोगों ने परिवार भी साथ ले जाने की मंशा व्यक्त की परन्तु कोविड के नृशंस कारनामों को ध्यान में रखते हुए यह जोखिम भरा कार्य था जिसे नकार दिया गया और केवल पुरुष वर्ग पर ही सहमति हो सकी। तय यह हुआ कि वह स्थान निर्धारित किया जाए जहां से रात तक वापसी हो सके। कोलकाता से लगभग 40 कि.मी. दूर बैडेल जाने की योजना बन गई किन्तु हमें यहां की भीषण चिपचिपी गर्मी का भी एहसास था। यह भी संभव था कि चाहे कितनी जल्दी हम करें फिर भी बैडेल पहुँचते-पहुँचते दस तो बज ही जाएंगे, इसके बाद चढ़ते सूरज की तपिश हम सभी को झेलनी होगी। बैडेल चर्च, जिसके नाम पर उक्त जगह का नाम बैडेल पड़ा है, एक छोटा-सा नगर है जो हुगली जिले के अन्तर्गत आता है। चर्च है तो काफी पुराना, पर बहुत सुंदर है। 1571 में मुगल सम्राट अकबर ने पुर्तगीज को बैडेल में पोर्ट बनाने के साथ ही साथ कैथोलिक धर्म के बारे में जनता को बताने की अनुमति भी प्रदान की थी। बैडेल चर्च का प्रथम निर्माण 1599 में हुआ पर 1632 में इसे मूर शासक ने जला कर नष्ट कर दिया था। 1660 में गोमेज-दी-सोटो द्वारा इसका पुनः निर्माण किया गया जो आज ऐतिहासिक धरोहर के रूप में जीवित है। शनिवार से ही मैंने तैयारी शुरू कर दी थी, फिर भी रविवार को सुबह 7.00 बजे आंख खुली तो देखा आकाश में घने बादल उमड़े हुए हैं। पानी कभी भी बरस सकता है। मन में डर समा गया कि पानी बरसने लगा तो कहीं कार्यक्रम में किरकिरी न हो जाए, फिर भी तैयार होना शुरू कर दिया। एक जोड़ी कपड़े बढ़ गये थे यह सोचकर कि अगर बारिश में भीग गए तो बदलने की जरूरत पड़ सकती है। कुछ मित्र कोलकाता से थे, जिन्हें हावड़ा से गाड़ी पकड़नी थी। रविवार छुट्टी का दिन होने के कारण लोकल में भीड़ नहीं थी। हम लोगों को आराम से बैठने की सीट मिल गई। वैसे भी सुबह में अप ट्रेनों में भीड़ नहीं होती जबकि कार्य दिवस में डाउन ट्रेनों में बहुत भीड़ होती है। इसका मुख्य कारण अधिकांश लोगों का कार्यस्थल हावड़ा, सियालदह या कोलकाता में होता है। हमने गाड़ी में ही नाश्ते वाले कार्य को यह सोचकर समाप्त कर लिया कि बैडेल

पहुँचकर यदि नाश्ते का काम करेंगे तो फालतू में समय जाया होगा।

प्रत्येक स्टेशन पर गाड़ी कुछ क्षणों को रुकती और फिर तुरंत गति में चल देती। हमलोग स्टेशन की गिनती करते हुए ठीक समय पर बैडेल पहुँच गए। बाहर निकलते ही चर्च के लिए बस मिल गई। कम खर्चे में ही हम चर्च के सामने खड़े थे। बैडेल चर्च बहुत संदर एवं आकर्षक बना है। प्रार्थना घर, बागीचा सभी मनमोहक थे। दीवारों पर बाईबिल की कहानी सचित्र अंकित थी। छोटे से बागीचे में जीसस की मूर्ति

के पास ही एक छोटा-सा फौव्वारा था जिसमें श्रद्धालु पैसे चढ़ाकर मन्त्रों मांग रहे थे। कहीं भी हमें गंदगी देखने को नहीं मिली। साफ एवं स्वच्छ सुलभ शौचालय भी यहां उपलब्ध था।



चर्च से बाहर निकलते ही हम ऑटो से इमामबाड़ा को प्रस्थान कर गए। इमामबाड़ा विशालकाय इमारत है। बाहर से देखने वालों को इसकी नक्काशी और विशाल स्वरूप आकर्षित कर लेता है। हम जैसे ही दरवाजे के अंदर पहुँचे तो चश्मा लगाए एक सज्जन पर नजर पड़ी जो आने वालों से प्रवेश शुल्क रु. 5/- वसूल कर टिकट थमा रहे थे। हमने भी टिकट लिया और फिर इमामबाड़े में घूमना शुरू किया। कला के कौशल को तराशती नजरों से जब ऐतिहासिक तथ्य खंगाला तो पता चला कि मीर केरामत अली ने 1861 में इमामबाड़ा को बनाने के लिए जगह उपलब्ध की थी। 1941 में विख्यात शिक्षाविद् एवं दानी हाजी मोहम्मद मोहसिन ने इसे बनवाया। इसके विशाल प्रवेश द्वार के ऊपर बने हुए गुम्बद लगभग 150 फुट लंबे हैं। दोनों गुम्बदों के बीच एक बड़ी सी घड़ी लगाई गई है जिसका वजन 20 किलो का है। इस घड़ी को इंग्लैंड से लाया गया था, तब से यह निरंतर काम कर रही है। हुगली नदी इमामबाड़ा के नीचे ही बह रही है। इसलिए इस इमारत की सुंदरता और ज्यादा बढ़ जाती है।

हम लोगों की यात्रा एक खुशनुमा मौसम में बहुत ही आनंदपूर्ण रही। बाहर निकलकर चाय-नाश्ते के बाद ऑटो से बैडेल स्टेशन और फिर लोकल से वापस अपने घर ठीक 8.00 बजे पहुँच गए। कमी-कमी मनो-मष्तिष्क को ताजा करने के लिए भ्रमण बहुत आवश्यक होता है जो हमें अपने कार्य की गतिशीलता के लिए नयी ऊर्जा प्रदान करता है।

- अशोक कुमार पाण्डेय

अनजान रिश्ते

राजेन्द्र त्यागी

असगर आज अपने गाँव चला गया। जाते-जाते खुद तो रोया ही हमारी आँखें भी नम कर गया। जाते-जाते ही क्यों, जाने के एक दिन पहले से ही वह इस तरह सुबक रहा था, मानों अपने अपने प्रियजनों से हमेशा-हमेशा के लिए बिछुड़ रहा हो। नहीं, साल-छह महीने बाद रोजी-रोटी की तलाश में अपना गाँव छोड़कर फिर उसे इस शहर की किसी झुग्गी को आबाद करना है! फिर भी हमसे बिछुड़ने के गम ने उसे रोने के लिए मजबूर कर दिया था। जब कभी असगर की मासूम सूरत मन में उतर आती है, मैं उसके साथ अपने रिश्तों के बारे में विश्लेषण करने लगता हूँ। सोचने लगता हूँ, अनजान रिश्तों के बारे में। और, कुछ अनजान रिश्ते भी होते हैं, इस मान्यता को स्वीकारने के लिए मजबूर हो जाता हूँ।

असगर गंभीर प्रकृति का इन्सान था। उसे कभी हँसते हुए नहीं देखा, मगर कभी उदास भी नहीं। बस गुमसुम अपने काम में लगा रहता। हाँ, एकबार मेरे कुछ सवाल पर वह मुस्कराया अवश्य था और फिर मौन हो गया था। शाम का वक्त था। राज-मिस्त्री काम समेट कर अपने-अपने घर चले गए थे। आदत के अनुसार असगर अभी भी साफ-सफाई के काम में जुटा था। मैं तभी दफ्तर से लौटा था। हाथ-मुँह धो कर कपड़े बदले और प्रेमलता से चाय के लिए गुजारिश की। प्रेमलता ने मुझे चाय का कप पकड़ाते हुए रोजाना की तरह असगर को भी चाय के लिए आवाज दी। असगर भी मेरे पास ही फर्श पर बैठ कर चाय पीने लगा।

चाय के साथ उसे एक कागज के टुकड़े पर रख कर दो लड्डू भी दिए गए। लड्डू कुछ दिन पहले ही हमारे गाँव से आए थे। खाते-खाते हम लोगों का मन भर गया था, अतः हम नहीं खा रहे थे। असगर को न दिए जाते तो शायद बाहर घूमते आवारा जानवरों को खिलाए जाते।

असगर बड़ी मासूमियत के साथ चाय के साथ लड्डू खा रहा था, तभी मेरे मन में एक शरारत सूझी। इसे शरारत ही कहूँगा, क्योंकि जिस तरह के सवाल मैंने उससे पूछने की चेष्टा की वे न तो उसके स्तर के थे और न ही उसके मतलब के। जिन लोगों से जिन सवालों का मतलब नहीं होता, उनसे बे-मतलब के सवाल पूछने के पीछे कभी हमारे जैसे इंसानों का अहम् और कभी दूसरों को छोड़ना, अर्थात् परिचितानुरंजन करना उद्देश्य होता है। यह एक इन्सानी फितरत है। असगर से सवाल पूछने के पीछे मेरा उद्देश्य भी चाय के साथ-साथ आफिस के बोझ से दिमाग को हल्का करना था, यानी कि उसे छोड़ना। मैंने सोचा, उससे पूछा जाए, "असगर, क्या

जिहाद का मतलब आतंक फैलाना है? कश्मीर भारत में रहना चाहिए या पाकिस्तान में? तुम्हें पाकिस्तान अच्छा लगता है या भारत? क्रिकेट में भारत की विजय पर खुश होते हो या पाकिस्तान की विजय पर?"

असगर मेरे सवालों को सुनकर मुस्करा दिया। जवाब देना शायद उसने व्यर्थ की कवायद समझा होगा, इसलिए वह मौन था। मैंने उसके चेहरे की ओर देखा और एकाएक मुझे अहसास हुआ कि वह नहीं, उसका मासूम चेहरा मेरे सवालों के जवाब दे रहा है, "बाबू जी का हमार सुझाव, बेवहार राऊर सवाल के उत्तर नाइरवे। ई इन्सानी सवाल हाँ! कवनो इन्साने से पूछेब।

वह सुबह मुझे आज भी याद है। वही सुबह क्यों, उसके साथ गुजरी हर सुबह मेरे मन में पुरातत्व संग्रहालय में प्राचीन पांडुलिपियों की भांति सुरक्षित है। उस दिन की सुबह, मौसम कुछ मेहरबान-सा था। कई दिनों के बाद सूरज ने कोहरे के बीच से मुँह चमकाया था। कोहरे के झीने दुशाले के बीच से मंद-मंद मुस्कराता सा सूरज, ऐसा लग रहा था, मानों दुशाले की ओट से चोरी-चोरी प्रकृति के सौंदर्य को निहार रहा हो।

सुबह की गरम-गरम चाय की चुस्की लेकर मैं शरीर में ऊर्जा संचार करने की चेष्टा कर रहा था। तभी एक मासूम से चेहरे के साथ ठेकेदार कृष्णा सुबह के अखबार की तरह मेरे सामने था। हम कई दिन से उसका इंतजार कर रहे थे कि वह आए और कैसे भी मकान की ऊपर वाली मंजिल की चिनाई का काम शुरू हो। उसके साथ केवल एक अदद इन्सान देख मेरे माथे में बल पड़ गए थे। गुस्सा जाहिर करते हुए मैंने उससे कहा था, "कई दिन इंतजार कराने के बाद आज आए और आज भी इस मरियल छोकरे के साथ! क्या इसी तरह ऊपर की मंजिल खड़ी करोगे?"

कृष्णा ने मुझे आश्चर्य किया और मासूम से उस छोकरे को छत की मुँडेर तोड़ने पर लगा दिया था। छोकरा मशीन की तरह अपने काम पर जुट गया और अकेला ही जुटा रहा। मरियल से उस छोकरे ने एक दिन में ही इतना काम कर दिया कि कृष्णा को अगले दिन राज-मिस्त्री लाने के लिए मजबूर होना पड़ा था। वही मरियल सा छोकरा ही असगर था।

गाँव जाने से पहले लगभग एक-डेढ़ मास तक असगर हमारे यहाँ बेलदारी करता रहा। इस दौरान तकरीबन आधा दर्जन राज-मिस्त्री और बेलदार आए-गए हुए होंगे, मगर वह हमेशा ही समय से पहले बिना नागा काम पर मुस्तैद रहा। धरती में गड़ा-गड़ा सा

मेट्रो चेतना

वह मासूम चेहरा सुबह-सबरे सबसे पहले दरवाजा खुलवाता और बिना किसी से पूछे जो कुछ करने को दीखता उसमें जुट जाता।

खुद तो काम में जुटा ही रहता, अनधिकार चेष्टा करता हुआ राज-मिस्त्री और दूसरे बेलदारों को भी निर्देश देता रहता, "मिस्त्री जी मसाला मत खराब कर। ..अरे फैलाव मत!"

वह बेलदार था, मिस्त्री भला उसकी कहाँ सुनने वाले थे। असगर की नसीहत को अनसुना कर वे बेपरवाह दिहाड़ी मजदूर की तरह 'माले मुफ्त बेरहम दिल' की तर्ज पर हाथ चलाता रहता।

किसी बेलदार को बीड़ी सुड़कते देखता, तो उस पर बरस जाता, "सुन! मालिक से मजूरी त पूरी लेबा। रेत के चार गो कट्टा चढ़वले बानी। मसाला खतम हो जाई त मिस्त्री बइठ जाइहें। चल तू मसाला पकड़वा!" वह बेलदार पर बरसता और उसके हाथ से कट्टा छीनकर खुद दूसरी मंजिल पर रेत ढोने लगता। दिन भर उसका यही क्रम रहता। कभी रेत ढोता, तो कभी मसाला पकड़ाता, मगर राज-मिस्त्रियों को बीड़ी सुड़कने का बहाना बनाने का मौका न देता।

दिन ढलते-ढलते राज-मिस्त्री औजार साफ कर अपने-अपने घरों की तरफ रुख करने की तैयारी करते और असगर की बक-बक शुरू हो जाती, "फोकट के माल बुझा रखि लिए है कि! बनल-बनावल मसाला छोड़ के चल जईब जा! सबेरे तक मालिकार के सिरमिट खराब हो जाई! मिस्त्री जी एक तसला मसाला बचला बा! आव एक हाथ लगा द!"

मैं जब-कभी राज-मिस्त्रियों को काम समझाता, वह काम में लगा-लगा ही वह सारी बात ध्यान से सुनता। मेरे कहने के बावजूद परिवार के सदस्य जिस काम से कन्नी काट जाते, दिहाड़ी का काम पूरा कर वह उस काम में जुट जाता। यह उसकी ईमानदारी ही थी कि दिहाड़ी के समय वह केवल ठेकेदार का काम करता और दिहाड़ी-वक्त से पहले और बाद सुबह-शाम बाकी काम निपटाता। इस तरह सबसे पहले आता और सबके बाद अपनी झुग्गी की तरफ लौटता।

गाँव जाने से एक दिन पहले भी सुबह-सबरे काम पर आ गया था, मगर उदास-उदास सा। दफ्तर जाते-जाते मैंने प्रेमलता से कहा था- ऊपर जाकर देख आओ राज-मिस्त्रियों को किसी समान की जरूरत तो नहीं है? प्रेमलता ऊपर पहुँची, तो एक मिस्त्री ने बताया कि पता नहीं असगर आज क्यों उदास है? प्रेमलता ने उसका चेहरा देखा, असगर की आँखें भरी हुई थी। प्रेमलता ने सहज भाव से ही उससे पूछ ही लिया, "क्या बात है, उदास क्यों हैं, असगर?" जवाब में असगर के आँखों से आँसू झरने लगे। प्रेमलता ने सांत्वना देते हुए फिर कहा, "ठेकेदार ने कुछ कह दिया, क्या?"

"ना-ना अम्मी जी!" इतना कहते ही असगर के झरते आँसुओं का बहाव तेज हो गया था। अप्रत्याशित इस व्यवहार से प्रेमलता हतप्रभ थी। सांत्वना देते हुए उसने फिर पूछा, "अरे बता तो सही क्या हुआ?"

सुबकते-सुबकते असगर बोला, "अम्मी जी काल्ह हम गाँव चले जाई।"

उसके रोने का कारण सुन प्रेमलता हतप्रभ थी। उसने असगर को दिलासा देने का प्रयास किया, "अरे! इसमें रोने की क्या बात है। माँ के पास जा रहा है, अच्छी बात है। खुशी-खुशी जाना चाहिए।"

प्रेमलता के मुँह से निकले सांत्वना के कृत्रिम बोल शायद असगर पर असर नहीं कर पाए और पलकों के बांध तोड़ उसके आँसू फिर बहने लगी।

"कोई बात नहीं, रो मत। अच्छा! गाँव से कब लौटेगा?" प्रेमलता ने बात बदलने की मंशा से पूछा।

"एक महीना बाद।" उसने जवाब दिया।

असगर का स्नेह देख प्रेमलता की आँखें भी भर आई थी। आँखें पोंछती-पोंछती तेज कदमों के साथ वह भूतल की तरफ चली आई। और, आँखों में स्नेह के बूंदें लिए असगर फिर अपने काम में जुट गया।

पल्लू से अपनी आँखें पोंछते-पोंछते प्रेमलता ने पूरा किस्सा परिवार के बाकी सदस्यों को सुनाया और फिर मिस्त्री-बेलदारों के लिए चाय ले जाने के लिए पुत्रवधू सुमन से कहा। जग में चाय भर कर सुमन ऊपर गई। उसे देख, असगर की आँखें फिर झरने लगी।

"भौजी! काल्ह हम अपने गाँव चले जाई।"

"इसमें रोने की क्या बात है? घर जाते समय रोया नहीं करते, भइया! ..गाँव से लौटकर फिर काम पर आ जाना!" सुमन ने उसे दिलासा दी।

"नहीं, भौजी! हम ठेकेदार से कहलें रहीं कि हमार आठ तारीख के टिकट बा। काम फुर्ती से करद। लेकिन वा देर कर देन। हम चाहत रहीं के काम पूरा करके ही गाँव जाई। पता नहीं दूसरा बेलदार कइसे आ गईल।"

रोने के कारण के पीछे निःस्पृह मूल कारण सुन, सुमन की भी आँखें भर आई थी। उस दिन असगर रह-रह कर पूरे दिन आँसू बहाता रहा और हमारे परिवार का जो सभी सदस्य उसे मिलता उसे ही अबोध किसी बालक की तरह सुबक-सुबक कर बताता-

'बड़का भइया, काल्ह हम गाँव चले जाई।'

'छोटका भइया, काल्ह हम गाँव चले जाई।'

'छुटकी भोजी, काल्ह हम गाँव चले जाई।'

मेट्रो चेतना

दोपहर का भोजन करने मैं घर आया। सीधा ऊपर गया जहाँ काम चल रहा था। रोज़ की तरह सभी का हालचाल पूछा। सभी ने कुछ न कुछ जवाब दिया। मगर असगर का उदास चेहरा देख कर कुछ असहज-सा लगा। प्रेमलता से पूछा, "क्या बात है? आज असगर नाराज है क्या, ..क्यों?"

चुप रहने का रहस्यमयी इशारा करते हुए प्रेमलता ने होंठों पर उँगली रख ली। मैं उसके साथ नीचे उतर आया। नीचे आकर पूरा किस्सा सुनाया। मेरे मुँह से निकला, "पागल!"

भोजन करने के बाद जब मैं दफ्तर जाने के लिए कार में सवार हुआ, तो असगर खिड़की के पास खड़ा था और उसके मुँह से वही वाक्य फूट रहा था, "काल्ह हम गाँव चले जाई।"

मेरी निगाह असगर की तरफ उठी। उसकी आँखें बरसाती पतनारे की तरह बह रही थी। मैं उससे बात करने की हिम्मत न जुटा पाया। उसका सामना नहीं कर पाया। मैं कमजोर निकला और सांत्वना के बोल मुँह में दबाए-दबाए कार का एक्सिलेटर दबाया और भाग खड़ा हुआ।

असगर का व्यवहार कभी-कभी मुझे सोचने के लिए मजबूर करता, आखिर हमारे साथ उसके लगाव का कारण क्या है? आजकल जाति, पंथ, गाँव-गवांड, क्षेत्र, आर्थिक, सामाजिक समानता के जिन पैमानों से संबंधों की पैमाइश की जाती है, उनमें से कोई भी कारण हमारे और उसके मध्य नहीं था।

कोई स्वार्थ का कारण हो सकता है, मगर उसने तो दिहाड़ी से अतिरिक्त काम करने के लिए कभी मजदूरी नहीं माँगी। हाँ, हाड़ ठिठुराती ठंड में अन्य राज-मिस्त्रियों के साथ दिन में एक दो बार उसे भी एक गिलास चाय का पानी जरूर मिल जाता था। हाँ, वह चाय नहीं, चाय का पानी ही होता था, क्योंकि चाय नाम के उस पनीले-पनीले द्रव्य का एक घूँट भी लेना मुझे गवारा न था।

चाय का पानी पिलाने में भी परिवार के अन्य सदस्य मुँह बनाते। मैं उन्हें समझाता, "क्या हुआ, बहुत ठंड है। पुण्य मिलेगा।"

चाय का वह पानी भी निःस्वार्थ नहीं था। उसमें भी पुण्य कमाने के स्वार्थ की मिलावट रहती।

नाश्ते में एक दिन परांठे बने थे। चिकित्सीय प्रतिबंध के बावजूद मेरा मन परांठे उड़ाने के लिए कर रहा था। इसके साथ ही एक और पुण्य कमाने का ख्याल मन में आया। क्यों न काम पर लगे सभी लोगों को मूली का भरवा एक-एक परांठा खिलाया जाए! पत्नी के सामने इच्छा जाहिर की। पत्नी ने जवाब में अनिच्छा जाहिर की, "क्यों आदत खराब करते हो?"

ठिठुरती आवाज में मैं ने कहा था, "रोज-रोज थोड़े ही खिला

रहे हैं, एक दिन में कहीं आदत खराब नहीं होती!" मेरा इतना कहना था कि पुत्रवधू सुमन ने व्यंग्य बाण चलाया, "मम्मी! खिला भी दो, नहीं तो पापा का दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा!"

मैं उसी ठिठुराते अंदाज में फिर बोला, "दिल टूटने का सवाल नहीं है, बेटे! कोई ज्यादा खर्च थोड़े ही हो जाएगा! जानवरों को भी तो खिला देते हैं। वे तो फिर भी इन्सान हैं!" उस दिन असगर सहित उन सभी को परांठे खिला तो दिए थे। मगर 'जानवार और इन्सान' के अपने तर्क पर मैं खुद ही शर्मिदा था, लेकिन तर्क मेरी मजबूरी थी। और, इसके साथ ही मेरे सामने एक प्रश्न खड़ा था-स्वार्थी कौन! हम या असगर!

शुक्रवार दो जनवरी की सुबह थी। हाड़काँप ठंड, इंसानियत की तरह गिरता तापमान चार डिग्री के आसपास पहुँच गया था। घमंड की तरह घने कोहरे की चादर चारों तरफ तनी थी। हाथ को हाथ नहीं दिखाई पड़ रहा था। किसी ने दरवाजा खटखटाया। मुँह से निकला, "इतनी ठंड में कौन आ गया, कमबख्त।"

ठंड के मारे कोई भी दरवाजा खोलने की हिम्मत नहीं जुटा पा रहा था। लिहाजा सभी एक दूसरे का मुँह ताक रहे थे। प्रेमलता ने दरवाजा खोला। मैंने भी रजाई से मुँह बाहर निकाला। फटी सी चादर और एक कमीज पहने दरवाजे पर असगर खड़ा था। काम पर उस दिन केवल वही आया था, बाकी सभी छुट्टी मार गए थे। ठिठुराती ठंड में हमें उसके आने की भी उम्मीद नहीं थी।

बिना सहारे की लता की तरह काँपते असगर को देखा और निवेदन के लहजे में प्रेमलता से कहा, "ठंड बहुत है, बेचारा बीमार पड़ गया तो काम रुक जाएगा। उसे पुराना कोई स्वेटर, लोई दे दो ओढ़ लेगा!"

मुझे मालूम था, जवाब क्या आना है! प्रेमलता की तरफ से न सही, परिवार के किसी अन्य सदस्य की तरफ से तो अवश्य ही तेज आँच में जली रोटी सा जवाब आएगा।

प्रेमलता मेरा मुँह ताक रही थी, तभी छोटी पुत्रवधू प्रीति की आवाज आई, "मम्मी! पापा की रजाई भी दे दो, असगर को।"

प्रीति के उलाहना भरे जवाब से मैं शर्मसार था। झेंप मिटाने के लिए मैं बोला, "कौन पहनता है, उस स्वेटर को, घर में कौन ओढ़ता है, लोई? बेकार ही तो रखे हैं। किसी के काम आ जाएँगे तो इसमें हर्ज क्या है!"

असगर के आँसू देख मैं शर्मिदा था। मेरे मन में ग्लानि भाव उत्पन्न हो गया था। हमने उसे कुछ दिया भी, मगर अपना हित देख कर अथवा अनुपयोगी वस्तु होने के कारण! उस सौगात को उसके निश्छल स्वभाव व निःस्वार्थ आँसुओं के साथ नहीं तौला जा सकता। ऐसा किया गया तो कबाड़ के साथ किसी की कोमल

मेट्रो चेतना

भावना तौलने के समान ही होगा!

ठंड में सिकुड़ते असगर को प्रेमलता ने सौ रुपए के जूते पहनाए थे। वह भी इसलिए कि केवल सौ रुपए के थे। उसके पीछे भी वही भाव प्रमुख था, "क्या हुआ सौ रुपए के ही तो हैं। सौ रुपए में हजार रुपए का पुण्य प्राप्त होगा! ..सौ रुपए तो अंकित ही खेल-खेल में खर्च कर डालता है।

गांव जाते वक्त प्रेमलता ने उसे कुछ और भी सौगात दी थी। वहाँ भी हम पर हमारा अहम भाव हावी था। सभी सामान जो हमारे लिए बेकार था, सौगात के रंग-बिरंगे पैकिंग में लपेट कर हम उसे सौंप रहे थे। मानो घर में मौजूद कबाड़ रंगीन कागज में लपेट कर किसी को ठगने का प्रयास कर रहे हों। हमारी नीयत कहीं भी तो उसके आँसुओं की तरह निःस्वार्थ और निश्छल न थी।

सौगात के रंगीन कागज में लिपटा कबाड़ सौंपते हुए पत्नी ने उससे कहा, "असगर! जब गाँव से लौट कर आए तो हमसे मिलने जरूर आना।"

पत्नी के स्वार्थ पूर्ण दया-भाव के बदले कमबख्त जाते-जाते फिर एक निश्चल स्नेहिल सौगात दे गया। जाने से पहले उसने कहा था- हाँ, अम्मी जी! जब हम लौट कर आएँगे, तो हमारी 'वो' आपके घर काम करेगी। अम्मी जी उसे पैसे मत देना। अब हम आप से पैसे नहीं लिया करेंगे!

मैं यहाँ 'बदला' शब्द का गलत इस्तेमाल कर रहा हूँ। बेकार की वस्तु और स्वार्थ से पगे स्नेह के बदले में कोई भी इन्सान ताउम्र मुफ्त में काम करने का इरादा क्यों जाहिर करेगा? वह भी तब, सभी प्रकार के दबाव से भी मुक्त, वह हमसे विदा होकर जा रहा हो।

वह जाते-जाते हमें हमारी औकात बता गया। वह खुलासा कर गया, तुम्हारा स्वार्थी स्नेह, तुम्हारी सौगात भी मेरे निश्चल स्नेह, मेरे निःस्वार्थ आँसू का कारण नहीं है।

मैं महसूस कर रहा हूँ, जिसे हम संबंधों का कारण मान रहे थे, वह भी हमारा मात्र अहम ही है।

वह हमारे यहाँ बेलदारी करता था, मगर उसका बेलदार होना भी उसके साथ हमारा सीधा संबंध नहीं जोड़ता था। वह हमारा नहीं ठेकेदार का बेलदार था, दिहाड़ी उसे ठेकेदार ही देता था। न जाने कितने घरों की नींव रखी होगी उसने? क्या काम पर से विदा होते समय वह सभी के यहाँ इसी तरह आँसू बहाता होगा?

शायद नहीं!

फिर हमारे यहाँ क्यों?

अनसुलझे से इस सवाल का जवाब प्रेमलता ने दार्शनिक लहजे

में देने का प्रयास किया था, "जरूर पिछले किसी जन्म में हमारा सगा-संबंधी रहा होगा!"

प्रेमलता का अपना दर्शन है, अपनी सोच है। परिचित-अपरिचित जब भी कोई हमारे परिवार के साथ आत्मीय-भाव प्रदर्शित करता है, वह उसके साथ ही पूर्वजन्म के काल्पनिक संबंध जोड़ने लगती है। यहाँ तक कि पालतू कुत्ता भी उसे पूर्वजन्म का ही कोई सगा-संबंधी लगता है।

उसके इस दार्शनिक सिद्धांत का खंडन करते हुए मैंने कहा, "क्या बात करती हो, इस जन्म के सगे-संबंधी तो मरने पर भी इस तरह आँसू नहीं बहाते। पूर्वजन्म के सगे-संबंधी भला क्यों आँसू बहाने लगे।"

"फिर, असगर?" प्रेमलता ने मेरे तर्क के संबंध में प्रश्न जड़ते हुए आगे कहा, "चलो, एक बात तो माननी पड़ेगी, चाहे जो भी हो असगर है, भला इन्सान।"

"क्या बात करती हो इन्सान और भला!" व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन में बेवजह दखल देने वाले नाते-रिस्तेदारों की एक लंबी फेहरिस्त पत्नी के समक्ष खोल कर रख दी और पूछा, "क्या वे सभी इन्सान नहीं हैं?"

"नहीं, जानवर!" प्रेमलता के मुँह से निकला।

"उन्हें जानवर मत कहो। ऐसा कहना तो बेचारे जानवरों का अपमान होगा।"

"फिर?"

"इन्सान के मायने बदल गए हैं। इन्सानियत की परिभाषा बदल गई है। अब निष्ठा-स्नेह, मेहनत-ईमानदारी जैसे इन्सानी गुणों का स्थान प्रोफेशनल व प्रैक्टिकल जैसे व्यावसायिक सदगुणों ने ले लिया है। वे इन्सानी गुण अब इन्सान में नहीं जानवरों में पाए जाते हैं।"

"इसका मतलब! असगर इन्सान नहीं, जानवर है?"

"हाँ! वह इन्सान के रूप में जानवर ही है, सच्चा जानवर।"

"यह तो एक भले आदमी का अपमान हुआ!"

"नहीं, यह अपमान नहीं उसका सम्मान है, हकीकत है! असगर यदि निपट इन्सान होता तो प्रोफेशनल होता, प्रैक्टिकल अप्रोच वाला होता। वह फिर खुद न रोता, उसके प्रोफेशनल और प्रैक्टिकल कारनामे याद कर-कर हम आँसू बहाते। तब वह हमारे साथ अनजान रिश्ते न कायम करता!"



चिट्ठी आई है

कोरोना काल ने तो हमारे दिनचर्या को अस्त-व्यस्त सा ही कर दिया है। रोजमर्रा जैसे बेतरतीब से हो गए हैं। कार्यालयों में रोस्टर ड्यूटी की नयी परंपरा चल पड़ी है। सप्ताह में किसी दिन कार्यालय गए तो कभी घर से काम कर लिये। ऐसे ही उस दिन मेरी रोस्टर



ड्यूटी नहीं थी। घर पर ही कार्यालय के कार्य करने थे। कुछेक आवश्यक कार्यों को निपटाने के पश्चात मेरे पास कुछ समय बचा था। अतिरिक्त समय का क्या करूँ

यही सोच रहा था। फिर ध्यान आया कि कमरे की सफाई ही कर लूँ। सफाई के क्रम में मेरे हाथ एक पुरानी अटैची पर जा पड़ी जो स्कूल कॉलेज के समय से मेरे साथ है। जाने क्या सोचकर मैं उसे खोल कर देखने लगा। कपड़ों की तहों को हटाते हुए मेरी नजरें कुछ पुराने चिट्ठियों पर जाकर अटक गई। कौतुहलवश मैंने चिट्ठियां उठा लीं और उन्हें पलटकर पढ़ने लगा। बीते दिनों की यादें बरबस ही मन को गुदगुदा गए। चिट्ठियां पढ़ते हुए कदाचित्त मैं उन दिनों की स्मृतियों में खो सा गया जब चिट्ठियां, खत, पत्र हमारे जीवन के अहम हिस्से हुआ करते थे। चिट्ठी पत्रियों के क्या ही वे दिन थे जब ना तो मोबाइल फोन हुआ करते थे और न ही ईमेल जैसी सुविधाएं। बस थी तो ये चिट्ठियां जो हमारे घर-परिवार, मित्र-बंधु, गांव-समाज का हाल समाचार सुना जाती थीं।

कदाचित्त मुझे भी पत्र लिखना अत्यंत प्रिय था। इस विधा में नए नए प्रयोग भी करते रहते थे। कभी-कभी तो दूसरों के पत्रों को पढ़कर उनकी शैली की नकल भी किया करते थे ताकि चिट्ठी अत्यंत रोचक और पठनीय बन पड़े। मैं अपने पत्रों में अक्सर शायरी, कहावत, मुहावरे आदि शैलियों का भी बहुतेरे उपयोग करता था। उनमें से एकाध तो मुझे अभी भी याद है जैसे कि 'बीत गया सावन तो क्या...काली घटा फिर वही बरसात लेकर आएगा, सुख-या दुख मेरा अगला खत नया पैगाम लेकर आएगा'। पत्र के अंत में जब कहने को कुछ नहीं रह जाता तो अक्सर लिख डालते 'थोड़ा पढ़ना ज्यादा समझना...'। कभी लिखते 'इस पत्र में यहीं

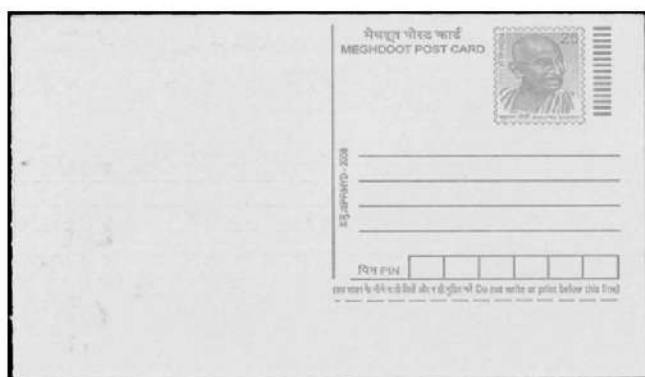
तक ...अगले खत में फिर मिलेंगे' इत्यादि।

किसी प्रियजन की चिट्ठी मिलने पर ऐसा लगता मानो वह सशरीर हमारे पास मौजूद है। दसियों बार चिट्ठी पढ़ डालते, हर लफ्ज, हर अल्फाज बारीकी से पढ़ा जाता। शब्दों के मर्म दिलों में समा जाते। औपचारिकता अंशमात्र भी नहीं होती, एक-एक अक्षर मानो मन से गढ़ा गया हो। पति-पत्नी, प्रेमियों के लिए मानो चिट्ठी दुर्लभ वस्तु के समान थी जिसे वे सीने से लगाए रखते। चिट्ठी अपने साथ खुशियां लाती थी, बच्चों का हाल सुनाती थी तो किसी को नौकरी का संदेशा देती थी, बूढ़े मां-बाप को बेटे के मनीऑर्डर का इंतजार होता था, जिसमें पापा के आशीर्वाद होते और मां की ममता होती। दादा दादी का हाल खबर मिलता था, दोस्त यारों की मस्तियों के समाचार मिलते थे, किसी की शादी का दावतनामा होता तो कोई अपने प्यार का हाले दिल लिखता। नए साल पर ढेर सारे कार्ड बधाईयों की चिट्ठियां होती। गर्मियों की छुट्टियों में घर लौटने के लिए गांव में चिट्ठी लिखते, पहुँचने की दिन तारीख सूचित करते और चिट्ठी में लिखी तारीख एवं समय के अनुसार गांव से रिश्तेदार लिवाने भी आ जाते थे।

उन दिनों डकिये के हाथ में थैला देखते ही मन हिलोरें मारता था। शायद कोई चिट्ठी आई हो, इसी उम्मीद से मन उल्लासित हो उठता। कई बार बैरंग चिट्ठियां भी आती थी जिसे पैसे देकर छुड़ाने पड़ते थे, परंतु चिट्ठी पाने के उतावलेपन में पैसे का गम नहीं होता। उस वक्त दूरियां बहुत थी, पर महीने दो महीने में आनेवली चिट्ठियां पढ़कर ऐसा लगता जैसे सबकुछ कागज के इस टुकड़े में सिमट

गया हो। उस समय कई ऐसे बड़े-बुजुर्ग लोग भी थे जिन्हें चिट्ठियां लिखनी नहीं आती, ऐसे लोग दूसरों से चिट्ठी लिखवाते। दूसरों के लिए चिट्ठियां





लिखने में भी अलग ही मजा था। रात को घंटो बैठकर चिट्ठियां लिखते, कई बार पसंद नहीं आती या गलतियां हो जाती तो फाड़कर फेंक देते फिर दूसरी लिखने की कोशिश करते। यही नहीं एक-दूसरे की चिट्ठी पढ़ने की भी ललक होती थी। कई बार हम चोरी छिपे दूसरों की चिट्ठियों पढ़ने से भी चूकते नहीं थे। कभी लाल स्याही से लिखा चिट्ठी पाते तो मन किसी अनहोनी की अशंका से कांप उठता। कहीं कोई दुखद समाचार न हो। रंग-विरंगी ग्रीटिंग कार्ड को देखते ही दिल खुश हो जाता था और सालों उसे सहेज कर रखते थे।

संचार क्रांति के इस युग में अब प्रायः नहीं आती अपनों की चिट्ठी-पत्री। घर से विदा होते समय अब कोई नहीं कहता कि पहुँचते ही चिट्ठी लिखना। अब खत में फूल भेजना तो दूर कोई किसी को खत भी नहीं लिखता। अब तो बड़े दिनों के बाद भी चिट्ठी नहीं आती और न ही कोई घर के दरवाजे पर निगाहें गढ़ाता हुआ डाकिए का इंतजार करता है। सच तो यही है कि अब दिल की बात, सुख-दुख, हंसी - ठिठोली का अहसास कराने वाली चिट्ठी मोबाइल फोन में खो सी गई है और हमारी संवेदनाएं, हमारे अहसास जैसे कहीं डूब से गए हैं मोबाइल क्रांति और नेट ने रिश्तों के तार बेशक जोड़ दिए हैं पर अब संवेदनाएं कहीं मर सी गई लगती हैं। रिश्तों के खालीपन को बातों से भरने की कोशिश जरूर करते हैं पर हालेदिल बयां करने का जो काम एक चिट्ठी कर सकती है शायद वह नेट और मोबाइल के बस की बात नहीं है। न जाने कहां खो गए हैं वो पिन कोड, वो अंतर्देशीय पत्र कार्ड, वो लिफाफे, वो पोस्टकार्ड और वे वैरंग चिट्ठियां। पता नहीं फिर कभी कोई डाक बाबू कोई चिट्ठी लेकर आएंगे भी या नहीं।

राजेश एका,
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी

कोरोना

सुबह कोरोना
शाम कोरोना
जहां भी जाओ
वहां कोरोना
घर से निकले
तो कोरोना
घर में आए
तो कोरोना।
सुबह सबेरे उठकर हम
सुनते बस एक नया कोरोना
रात को सोने जाने तक
सुनते बस एक नाम कोरोना
चाहे जनता, चाहे मंत्री
या दारोगा या हो संतरी
सबके मुख से केवल सुनते
बदनाम-ए नाम कोरोना
अखबारों पर नाम कोरोना
टी.वी. पर भी आम कोरोना
जहां भी चाहे नज़र फिरा लो
संकट का दूजा नाम कोरोना
है हर ओर कोविड का भय
लॉकडाउन में बंद है दुनिया
कीमत है हर चीज के ऊँचे
पेट्रोल हो या हो वो धनिया
दहशत का हाल जो पूछो
सबके मुख पर यही कहानी
कोरोना जैसी बला न कोई
जो याद दिलाए सबको नानी

-ऋषभ कुमार राम
पुत्र श्री राजेश कुमार राम

दर्शन, मन्त्र और दक्षिणा

मार्च का महीना, रात के साढ़े नौ बजे थे, गाड़ी तीव्र गति से चली जा रही थी। स्लीपर क्लास में निचला बर्थ मिल गया था। पुरी से लौटते वक्त मैं अपनी सीट पर लेटा-लेटा बाहर के नजारे देखने का प्रयास कर रहा था। पर रात के अंधेरे में दूर-दराज के खम्भे में लटके टिमटिमाते बल्ब के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। यह केवल अनुमान ही था कि ये बल्ब खम्भों में लटके हुए हैं। ये टिमटिमाते बल्ब दूर से घूमते हुए पीछे निकल जाते।

दरअसल मैं एक बुजुर्ग व्यक्ति को, जो दूर के रिश्तेदार थे, पुरी तक पहुँचाने गया था। उनका नाम विष्णुदेव था। उनकी इच्छा थी कि मैं उनके साथ पुरी तक जाऊँ। उनका मुझ पर बहुत भरोसा था। मैं भी उनकी उम्र की कद्र करता और उनकी बातों को नहीं टालता था। एक दिन पहले हम दोनों हावड़ा से पुरी के लिए रवाना हुए। दूसरे दिन सुबह पुरी पहुँच गए। पुरी स्टेशन से बाहर निकलते ही एक रिक्शा वाले से तय हुआ कि वे हमें किसी होटल में ले चले। उसने दो-तीन होटलों के कमरे दिखाए। आखिर मैं एक होटल का कमरा पसन्द आ गया। हमने एक कमरा बुक किया और रिक्शा वाले को किराया दे कर छोड़ दिया। जल्दी-जल्दी हम स्नान-ध्यान कर भगवान जगन्नाथ का दर्शन करने चल दिए। मंदिर के द्वार पर पहुँचे तो देखा पंडों ने रास्ता बन्द कर रखा था। पूछने पर पता चला कि अभी प्रवेश बन्द है, अभी आरती हो रही है। दो-ढाई घंटे के बाद ही प्रवेश मिलेगा। धूप काफी तीखी थी दो-ढाई घंटे बाद तो काफी गर्मी लगने लगेगी। अभी यह सब सोच ही रहा था कि पंडों ने दो-चार लोगों को प्रवेश दे दिया।

मैंने एक पंडे से पूछा - अभी आपने कहा कि प्रवेश बंद है पर अभी-अभी तो उन लोगों को आपने जाने की अनुमति दे दी है।

उसने कहा - विशेष प्रवेश के तहत उन्हें जाने दिया गया है।

मैंने पूछा - विशेष प्रवेश का मतलब क्या है? क्या वे कोई वी.आई.पी. व्यक्ति थे?

पंडे ने जवाब दिया - नहीं इस अवधि में दस रुपये देकर कोई भी व्यक्ति विशेष प्रवेश पा सकता है।

सुनकर बड़ी खिन्नता हुई। मैं छाया में जाकर बैठ गया। साथ वाले विष्णुदेव बाबू ने कहा - अगर दस-दस रुपये देकर प्रवेश जल्दी मिल जाता है तो क्यों न हम दस-दस रुपये देकर ही भगवान जगन्नाथ का दर्शन जल्दी कर लें। समय का तकाजा देखते हुए मैं भी

सहमत हो गया। दस रुपये प्रति व्यक्ति के हिसाब से हमने उसे बीस रुपये दे दिए। बीस रुपये का कमाल यह रहा कि प्रवेश तो आसानी से मिल ही गया, साथ ही उसने यह भी बता दिया कि किस स्थान से देखने पर भगवान जगन्नाथ का स्पष्ट दर्शन होगा। हम दोनों सीधे उसी स्थान पर चले गए जहां पंडे ने बताया था। वहां कुछ और लोग पहले से खड़े थे। वे लोग भी शायद दस रुपये के ही यजमान थे। खैर दर्शन बड़े अच्छे ढंग से हो गया। भगवान जगन्नाथ का दर्शन करने के बाद भीतर के विभिन्न स्थानों तथा देवी-देवताओं का दर्शन करते हुए हम लोग बाहर निकले। बाहर देखा एक बड़े बरगद के नीचे एक पंडा बैठा था। लोग उससे धागा लेकर पेड़ की टहनी में बांध रहे थे। किंवदन्ती है कि इस बरगद में धागा बांधते समय लोग मन्त्रें मांगते हैं और उनकी मन्त्रें पूरी होती हैं। हाँ, मन्त्रें मांगने के बाद कोई एक फल एक पूरे वर्ष तक नहीं खाने का प्रण भी लेना होता है। विष्णुदेव बाबू उस चबूतरे पर चढ़ गए और मुझे भी बुला लिया। जब पंडे से धागा लेने की बारी आई तो मैंने ग्यारह रुपये निकाल कर दिया। ग्यारह रुपये देखते ही पंडे की तेवर चढ़ गई। उसने कहा कि एक धागे के इक्यावन रुपये से कम नहीं लेंगे। मैंने यह कहते हुए कि मैं बिना धागा बांधे ही जो भी मन्त्रें मांगनी होगी भगवान से मांग लूँगा और भगवान को पूरी करनी होगी, धागा लेने से मना कर दिया। यद्यपि मैं कभी मन्त्रें नहीं मांगता था पर उस दिन मैं ऐसे ही बूढ़े बरगद को प्रणाम किया और मन्त्र मांग ली।

ये सारी बातें मेरे दिमाग में कौंध रही थीं। सोचते-सोचते कब गाड़ी भुवनेश्वर में आकर रुक गई मुझे पता ही न चला। अचानक फेरीवालों की आवाजें सुनकर मेरी तन्द्रा भंग हुई तो देखा कि गाड़ी भुवनेश्वर पहुँच चुकी है। थोड़ी देर ठहरने के बाद फिर गाड़ी ने गति पकड़ ली। सोने का वक्त भी हो गया था। मैं सोने का प्रयास करने लगा। थोड़ी देर बाद मैं सो गया। सुबह लगभग पांच बजे नींद खुली तो देखा गाड़ी हावड़ा स्टेशन में प्रवेश कर रही है।

संयोगवश एक वर्ष होते-होते मेरी मांगी हुई मन्त्र पूरी हो गई। अब इसे उस बूढ़े बरगद का आशीर्वाद कहें या अपनी मेहनत, पर इतना अवश्य समझ में आ गया कि इन ढोंगी पंडों से भगवान बचाए।

जय जगन्नाथ।

- रंजीत कुमार सिन्हा

उधर मत जाना

एक गांव में विक्रम सिंह नाम का एक राजा रहता था। राजा को शिकार करना बहुत अच्छा लगता था। एक दिन राजा विक्रम सिंह शिकार खेलने गया और रास्ता भटक गया।

राजा विक्रम सिंह अब अपने घोड़े पर बैठा टप-टप करते एक गांव की तरफ जाने वाले कच्चे रास्ते पर तेजी से बढ़ा जा रहा था। अचानक उस गांव से निकलकर एक नौ-दस साल का बच्चा राजू कच्चे रास्ते पर चलकर गांव के बाहर आ पहुँचा। तब राजू ने घोड़ों के चलने की आवाज सुनी तो सामने दूर तक नजरें गड़ा कर देखने लगा।

उसने देखा राजा की वेश-भूषा में एक आदमी घोड़े पर बैठा सरपट उसके गांव की ओर चला आ रहा है। वह राजा विक्रम सिंह था। घोड़े की टापों की आवाज उसे साफ सुनायी दे रही थी और अब आवाज काफी पास आती जा रही थी।

अचानक राजू जोर-जोर से चिल्लाने लगा - “वहीं रुक जाओ! वहीं रुक जाओ! इधर मत आना।”

राजू कच्चे रास्ते की दाहिनी तरफ दूर तक जाकर मुड़ गया। फिर कच्चे रास्ते पर आकर भागते-भागते राजा के सामने आ पहुँचा। राजा ने सामने से एक बालक को भागते हुए आते देखा तो घोड़े की लगाम खींच ली और रुक गया।

राजू अभी भी चिल्ला रहा था - “रुको! रुको! वहीं रुक जाओ! इधर मत आना।” राजू के पास आने पर राजा ने राजू से पूछा - “बच्चे, तूने मुझे क्यों रोका?”

राजू ने कहा - “आपका घोड़ा सरपट दौड़ा चला आ रहा था। सामने इसी रास्ते पर लम्बी गहरी खाई खोदी गई है जो घास-फूस से ढंकी है, इसलिए वह खाई दिखाई नहीं दे रही है। मैं नहीं रोकता तो आपका घोड़ा इसमें गिर जाता और आपकी जान चली जाती। इसीलिए मैं घूमकर आपके पास दौड़ता हुआ आया और आपको आगे बढ़ने से रोका।”

राजा घोड़े से उतर आया। खाई देखकर उसने दांतों तले उंगली दबा ली और राजू को गले लगाकर उसे प्यार करने लगा। वह राजू से बहुत खुश था।

उसने राजू को धन्यवाद दिया और उससे कहा - “मैं एक राजा हूँ और आज तुमने मेरी जान बचाई है। इसलिए तुम मुझसे कोई भी चीज मांग सकते हो। मैं तुम्हें अवश्य दूँगा।”

राजू ने कहा - “ठीक है, मैं आपसे तीन कीमती चीजें मांगूंगा पर आज नहीं, फिर कभी।”

राजा ने कहा - “ठीक है, जैसा तुम चाहो।”

राजा विक्रम सिंह राजू को अपना पता बताकर वापस लौट गया। कुछ अवधि बीत जाने पर राजू एक दिन राजा के दरबार में

जा पहुँचा तो राजा उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुआ।

राजा ने राजू को अपने पास बुलाया और उसे गले लगाते हुए बोला, “बोल भले बालक! तुम्हें क्या चाहिए?” खजाना से लेकर जो कुछ भी इस राजा के पास है उसमें से तुम जो भी मांग सकते हो, तुम्हें फौरन मिलेगा। तुमने मेरी जान बचाई है।

राजू ने कहा - “आपने कोई भी तीन चीजें मुझे देने का वादा किया था। आज मैं आपसे वही तीन चीजें मांगने आया हूँ।”

राजा ने कहा - “हां, हां, बताओ। क्या हैं वे तीन चीजें?”

राजू ने कहा - “वे चीजें हैं - फौज की एक टुकड़ी, एक बड़ा तालाब और एक छड़ी।”

राजा ने आश्चर्य से पूछा - “तुम तो कुछ भी मांग सकते थे। फिर तुमने ऐसी तीन चीजें क्यों मांगी जो तुम्हारे किसी काम की नहीं? तुम इनका क्या करोगे?”

राजू ने कहा - “हमारे गांव में पास के जंगल से डाकू आते हैं और सब कुछ लुटकर ले जाते हैं। जिस कच्चे रास्ते से घोड़ों पर चढ़कर डाकू गांव में आते हैं, वहां हमने खाई खोदी है और उसे घास-फूस से ढंक दिया है ताकि जब डाकू आएंगे तो उसमें गिर जाएंगे। लेकिन इससे अनजाने ही अन्य दुर्घटनाएं भी हो जाती हैं। इसीलिए मुझे फौज की एक टुकड़ी चाहिए जो डाकूओं को मार गिराए और हमारे गांव के लोग सुरक्षित होकर अमन-चैन से रह सकें।”

राजा प्रसन्न हुआ। उसने कहा - “तुमने एक बड़ा तालाब भी मांगा है। तुम उसका क्या करोगे?”

राजू ने कहा - “हमारे गांव में सिंचाई का कोई साधन नहीं है, इसलिए वर्षा नहीं होने पर गांव की सारी फसल सूख जाती है। गांव में एक तालाब बन जाने से खेतों की सिंचाई हो सकेगी।”

राजा ने कहा - “और छड़ी का तुम क्या करोगे?”

राजू ने कहा - “मेरी दादी बूढ़ी हो गयी है। अब वह चलने में लड़खड़ा जाती है। उन्हें एक मूठ वाली छड़ी मिल जाएगी तो उन्हें चलने में सहारा मिल जाएगा और वह कभी नहीं गिरेगी।”

राजू की बातें सुनकर राजा विक्रम सिंह का सीना गर्व से फूल गया था। उसने राजू की दादी और गांव वालों के लिए ढेर सारे पुरस्कार और उपहार देकर राजू को उसके गांव के लिए सैनिक के साथ विदा कर दिया।

सभा में अभी भी राजू का जय-जयकार हो रहा था। राजा ने स्वयं अपनी देख-रेख में राजू के गांव की सभी समस्याओं को हल करवाया। राजू की दादी अब सोने की मूठ वाली छड़ी लेकर राजू के साथ चलती थीं। गांव वालों की सारी समस्याएं समाप्त हो गयी थीं तथा सभी खुशहाल हो गए थे।

- पेड़दा ममता राव

जीवन में गुरु का योगदान

हर व्यक्ति की सफलता के पीछे अगर किसी व्यक्ति का सबसे अधिक योगदान है तो वो हैं हमारे 'गुरु'। 'गुरु' शब्द संस्कृत से आया है और इसका सीधा-सा अर्थ हैं महान अर्थात् 'शिक्षक'। जन्म के बाद हमारे पहले गुरु होते हैं हमारे माता - पिता, जो बचपन से हमें अच्छे-बुरे की पहचान कराते हैं। वे बचपन से हमें ये सिखाते हैं कि हमें जिंदगी में सफल होने के लिए कौन सी अच्छाइयों को अपनाना चाहिए और कौन सी बुरी शक्तियों से हमें बचना चाहिए। अच्छाइयाँ जैसे - बड़ों का सम्मान करना, छोटों को प्यार करना, हमेशा सच बोलना और हमेशा सच्चाई का साथ देना तथा बुराई एवं अन्याय का विरोध करना।

जब हम थोड़े बड़े हो जाते हैं तो हमारे अभिभावक हमें विद्यालय भेजते हैं जिससे हम किसी प्रशिक्षित शिक्षक से व्यावहारिक एवं शैक्षणिक ज्ञान प्राप्त कर सकें। विद्यालय जाकर हम नए शिक्षकों से



मिलते हैं और उनके माध्यम से इस जगत को निरपेक्ष होकर देखने की शिक्षा प्राप्त करते हैं। हम इस संसार को खुद के हृदय से, खुद के विचार से देखने का दिव्य ज्ञान प्राप्त करते हैं। एक सच्चा गुरु कभी अपने शिष्यों में भेदभाव नहीं करते, बल्कि उन्हें मिल-जुलकर भेदभाव रहित रहने की सीख देते हैं। वे हमें ये सिखाते हैं कि "जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार की, पड़ा रहन दो म्यान।।" (- कबीर दास) अर्थात् :- हमें सज्जन व्यक्ति से उसकी जाति नहीं पूछनी चाहिए बल्कि उनका ज्ञान देखना चाहिए अर्थात् मनुष्य को उसकी जाति के आधार पर नहीं उसके ज्ञान के आधार पर परखना चाहिए क्योंकि जब हम तलवार खरीदने जाते हैं तो उसकी कीमत म्यान देखकर नहीं बल्कि धार देखकर लगाई जाती है।

युग और काल दोनों ही बदला, लेकिन गुरु की विशेषता नहीं

बदली। अगर हम परख पायें तो हम ये जान पाएंगे कि आज भी ऋषि विश्वामित्र और ऋषि संदीपन जैसे महान गुरु इस धरती पर जीवित हैं। इसीलिए आज भी सच्चाई की जीत होती है और बुराई का अंत, आज भी सूरज पूर्व में उगता है और पश्चिम में डूबता है, आज भी दिन होता है और रात आती है। एक गुरु के दिए गए ज्ञान और विद्या सिर्फ हमारे कार्य-जीवन में ही नहीं अपितु हमारे व्यक्तिगत जीवन में भी प्रभाव डालते हैं। ज्ञान और विद्या ही वो मंत्र है जो एक अच्छा एवं सम्मानित इन्सान बना सकता है। अगर

हम सबसे पहले एक अच्छा इन्सान नहीं हो पाए तो हम कभी जीवन में सफल नहीं हो पाएंगे। हां, ये हो सकता है कि हम उच्च पद पर नौकरी करें, बहुत सारे पैसों का अर्जन करें लेकिन हम खुद के हृदय के शिखर तक तब तक नहीं पहुँच सकेंगे जब तक हम अपने समाज, देश से प्यार और लगाव की भावना न रख सकें।

देवभाषा संस्कृत में कहा गया है -

“गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुर्साक्षात् परमब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।।”

अर्थात् गुरु ही ब्रह्मा है, गुरु ही विष्णु है, गुरु ही शिव है और गुरु ही साक्षात् परब्रह्म है। यह श्लोक हमें यह याद दिलाता है कि ईश्वर हमेशा हमारे साथ नहीं रह सकते हैं, इसलिए वे एक गुरु के माध्यम से हमारे पास इस संसार का ज्ञान पहुँचाते हैं। ऐसे गुरु को मेरा प्रणाम।

गुरु तो सब समान होते हैं लेकिन शिष्य अपने-आप में ये निश्चय करते हैं कि वे एक अच्छा शिष्य होंगे या बुरा शिष्य। जैसे इस संसार में अर्जुन जैसे महान शिष्य थे वैसे ही दुर्योधन जैसे निकृष्ट शिष्य भी थे। लेकिन इन दोनों के गुरु एक ही व्यक्ति थे और वे थे आचार्य द्रोण।। बस अंतर यह था कि अर्जुन द्रोणाचार्य

से अच्छे ज्ञान प्राप्त किए थे और दुर्योधन हमेशा अपनी मर्जी से चला। इसी वजह से अंत में महाभारत के युद्ध के दौरान दुर्योधन एवं सभी कौरवों की अकाल मृत्यु हुई और अर्जुन तथा सभी पांडवों को विजय प्राप्त हुआ। ऐसा इसीलिए हुआ क्यों कि पांडव सच्चाई के रास्ते पर थे और कौरव बुराई के रास्ते पर। सभी जानते हैं कि अंत में सच्चाई की जीत और बुराई की हार निश्चित है।

गुरु न सिर्फ हम से बड़ा बल्कि हमारे मित्र भी हो सकते हैं। इसीलिए डा. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम ने कहा है- “एक अच्छी किताब सौ दोस्तों के समान है, लेकिन एक अच्छा दोस्त एक पुस्तकालय के समान है।” एक सच्चे दोस्त का परिचय हमें हमारी विपत्ति के समय ही मिल पाता है। हम यह भी विश्वास करते हैं कि हर इन्सान के जीवन में एक अच्छा मित्र जरूर आता है जो न केवल एक सच्चा मित्र होता है बल्कि एक गुरु के रूप में भी मागदर्शन करता है।

एक गुरु हमें सदमार्ग अवश्य दिखा सकते हैं पर उस मार्ग पर चलना हमें ही है। एक चिड़िया जब छोटी होती है तो उसकी मां देखभाल करती है, उसे अपने चोंच से खाना खिलाती है लेकिन जब वही नन्हीं चिड़िया बड़ी हो जाती है तो उसकी मां ही उसे अकेले छोड़ देती है जिससे कि वह नन्ही चिड़िया स्वाभिमानी हो उड़ान भर सके। उस चिड़िया का सबसे बड़ा गुरु उसकी मां है। मनुष्य के जीवन में उनके गुरु भी कुछ ऐसे ही होते हैं, वो हमें गणित के सूत्र तो बता देते हैं लेकिन उनका समाधान हमें खुद ही निकालना पड़ता है। इसी तरह वे हमें अंग्रेजी, विज्ञान, हिंदी, इतिहास, भूगोल, सब पढ़ाते हैं लेकिन उन्हें समझना और अपने जीवन में हमें ही उतारना पड़ता है। एक सफल व्यक्ति होने के लिए विद्यार्जन के साथ-साथ हमें एक अच्छा इन्सान तो होना ही पड़ेगा। विदेश में जाने एवं वहां संपर्क-सूत्र के लिए अंग्रेजी का ज्ञान और अपने विशाल देश में हिंदी जानना आवश्यक है। ये हमें हमारे गुरु तथा शिक्षक ही सिखाते हैं।

अपने गुरु को श्रद्धा एवं सम्मान देने के लिए हम शिक्षक दिवस मनाते हैं। शिक्षक दिवस के दिन हम सभी उनके प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए उन्हें उपहार देते हैं एवं कई प्रतियोगिताएं भी आयोजित करते हैं। मैंने अपने विद्यालय में देखा है कि कक्षा 11 और 12 के छात्र एवं छात्राएं इस दिन शिक्षकों के कर्तव्य को भी निभाते हैं और बाकी छोटे बच्चों को संभालते हैं। इसके द्वारा हम शिक्षकों का हमारे प्रति कर्तव्य को समझ पाते हैं। कई विद्यालयों में तो कई तरह की प्रतियोगिताएं भी आयोजित की जाती हैं, जैसे

- निबंध और नारा लेखन प्रतियोगिता, कविता-पाठ प्रतियोगिता, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता एवं और भी न जाने क्या-क्या-।

अक्षर हम भारत के इतिहास की ओर देखें तो हमें कई महान गुरु पाने का सौभाग्य प्राप्त है, जैसे-विश्वामित्र (राम के गुरु), संदीपनी (कृष्ण के गुरु), द्रोणाचार्य (पांडवों और कौरवों के गुरु), गौतम बुद्ध (बौद्ध धर्म के संस्थापक), महावीर (जैन धर्म के संस्थापक), इनके अलावे और भी कितने ऐसे गुरु हैं। अगर हम भारत के मध्य इतिहास में देखें तो हमें इन शिक्षकों के नाम मिलेंगे - श्रीनिवास रामानुजम अयंगर (गणित), अबुल पाकिर जैनुल अब्दीमन अब्दुल कलाम (एयरोस्पेस इंजीनियर), डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, स्वामी विवेकानंद, आनंद कुमार और भी न जाने कितने गुमनाम शिक्षक, जो देश के भावी पीढ़ी को सजाते-संवारते हैं।

आज परिस्थिति बदल गई है। आज न हम अपने गुरु के पास जा सकते हैं न वे हमारे पास आ सकते हैं। आज गुरु और शिष्य हर दिन अपनी आंखों से न जाने कितने आंसू गिरा रहे हैं। विद्यालय में हमारे गुरु हमें जितना भी क्यों न मारें-डांटें लेकिन दिन के ढलते ही हमें यह अवश्य महसूस होता था कि हमारे गुरु हमारे साथ हैं। कोविड की इस महामारी ने हमारे जीवन का सबसे बड़ा सुख हमसे छीन लिया है, हमें अभी ऑनलाइन कक्षाओं में मिलना पड़ता है। इस ऑनलाइन माध्यम से हम एक-दूसरे से मिल तो पाते हैं लेकिन भौतिक रूप से न मिल पाने का दुख रह ही जाता है। हमेशा हमें ऐसा लगता है कि कहीं बहुत शून्य में हम जी रहे हैं।

हम भयावह परिस्थिति के शिकार हैं और अभी हमें जितना हो सके घर में तटस्थ रहना है। कोविड महामारी ने हमें यह सीख दे दी है कि हर आधे घंटे बाद-बाद हमें अपने हाथ साबुन और पानी से धोना, सैनीटाइजर के उपयोग से हाथ साफ रखना, जितना हो सके घर में रहना और अगर किसी जरूरी कार्य से हम बाहर निकलें तो अवश्य मास्क पहनना और बाहर जाने के बाद आंख-नाक और मुंह को स्पर्श न करना। इसके साथ खुद को हमेशा साफ-सुथरा रखना तो है ही। महामारी का अंत तो होना ही है, फिर हम अपने गुरु से साक्षात् मिलेंगे और पहले की तरह स्वाधीन जीवन जीएंगे।

- तिस्ता पाईक

पुत्री श्री जनार्दन पाईक

कंप्यूटर का विस्तार

कंप्यूटर विकास के इतिहास को अक्सर ही कंप्यूटरीकरण के विविध यंत्रों की अलग पीढ़ियों से जोड़ कर देखा जाता है। यहाँ कंप्यूटर के विकास यात्रा के विभिन्न चरणों को यूँ समझा जा सकता है।

1940 से 1956 : वैक्यूम ट्यूब्स

कंप्यूटर के पहले स्मृति/मेमोरी के लिए चुंबकीय (मैग्नेटिक) और परिपथीय (सर्क्यूटरी) ड्रम का इस्तेमाल करते थे जिससे ये काफी बड़े होते थे और पूरे कमरे की जगह ले लेते थे। यह इस्तेमाल में काफी महंगे होते थे और अधिक बिजली खपत, बेहद गर्मी पैदा करते और कई बार गर्मी से खराब भी हो जाते थे। पहली पीढ़ी के कंप्यूटर, परिचालन के लिए मुख्यतः मशीनी भाषा पर निर्भर होते थे और एक समय में एक ही समस्या का हल कर सकते थे। इनका इनपुट पंच कार्डों और पेपर टेप पर आधारित था जबकि आउटपुट केवल प्रिंटआउट पर ही दिखते थे।

यूनीवैक (यूनिवर्सल ऑटोमैटिक कंप्यूटर) और इ.एन.आई.ए.सी (इलेक्ट्रॉनिक न्यूमैरिकल इंटीग्रेटर एंड कंप्यूटर) पहली पीढ़ी के कंप्यूटर उपकरणों के उदाहरण हैं। यूनीवैक पहला व्यावसायिक कंप्यूटर था जिसे 1951 में संयुक्त राज्य अमेरिका के जनगणना ब्यूरो को दिया गया था।

1956 से 1963 ट्रांजिस्टर

वैक्यूम ट्यूब के स्थान पर ट्रांजिस्टर का प्रयोग शुरू हुआ और दूसरी पीढ़ी के कंप्यूटर अस्तित्व में आये। ट्रांजिस्टर की खोज 1947 में हो गई थी पर इसका व्यापक इस्तेमाल 1950 के दशक के अंतिम दौर में ही हो सका था। यह वैक्यूम ट्यूब से काफी परिष्कृत था जिसने कंप्यूटर को छोटा, तेज, सस्ता, ऊर्जा के बेहतर इस्तेमाल और पहली पीढ़ी के कंप्यूटर के मुकाबले अधिक भरोसेमंद बनाया। हालांकि ट्रांजिस्टर भी काफी गर्मी पैदा करते थे जिससे कंप्यूटर को नुकसान पहुँचता था, पर यह वैक्यूम ट्यूब के मुकाबले काफी बेहतर था। दूसरी पीढ़ी के कंप्यूटर भी इनपुट के लिए पंच कार्ड और आउटपुट के लिए प्रिंटआउट पर निर्भर थे।

दूसरी पीढ़ी के कंप्यूटर क्रिप्टिक बाइनरी मशीनी भाषा के मुकाबले सिंबॉलिक या एसेंबली लैंग्वेज का इस्तेमाल करते थे। इससे प्रोग्रामर को वर्ड्स में खास निर्देश देने में सुविधा होती थी। ऊँचे स्तर के प्रोग्रामिंग भाषा भी इसी समय खोजे गये, जैसे कोबोल (COBOL) और फॉर्ट्रेन (FORTRAN) की भी खोज हुई। ये वैसे पहले कंप्यूटर भी थे, जो अपनी स्मृति (मेमोरी) में अपने निर्देशों को संग्रहित रखते

थे, जिससे मैग्नेटिक ड्रम की जगह मैग्नेटिक कोर तकनीक का इस्तेमाल शुरू हुआ। इस पीढ़ी के पहले कंप्यूटर परमाणु ऊर्जा उद्योग के लिए विकसित किये गये थे।

ट्रांजिस्टर आधारित सर्किट

1964 से 1971 : एकीकृत परिपथ

तीसरी पीढ़ी के कंप्यूटरों की सबसे बड़ी विशेषता एकीकृत परिपथ के इस्तेमाल की थी। ट्रांजिस्टर को छोटा कर सिलिकॉन चिप पर लगाया गया, जिसे सेमी कंडक्टर कहते थे। इसने असाधारण रूप से कंप्यूटर की क्षमता और गति में बढ़ोत्तरी कर दी।

पंच कार्ड और प्रिंटआउट की जगह उपयोगकर्ताओं को तीसरी पीढ़ी के कंप्यूटर में मॉनिटर और की-बोर्ड से परिचित कराया गया। साथ ही, एक ऑपरेटिंग सिस्टम से भी वह मुखातिब हुए। इससे एक ही समय एक केन्द्रीय कार्यक्रम (सेंट्रल प्रोग्राम) के साथ कई सारे अलग-अलग अनुप्रयोग (एप्लिकेशन) लायक उपकरण बन सके। पहली बार कंप्यूटर एक बड़े वर्ग तक पहुँच सका क्योंकि वह पहले के मुकाबले अधिक छोटे और सस्ते थे।

इंटीग्रेटेड सर्किट

1971 से अब तक : माइक्रो प्रोसेसर

माइक्रो प्रोसेसर के साथ ही चौथी पीढ़ी के कंप्यूटर अस्तित्व में आये, जिसमें हजारों एकीकृत परिपथों (इंटीग्रेटेड सर्किट) को एक सिलिकॉन चिप में बनाया गया। जहाँ पहली पीढ़ी के कंप्यूटर पूरे कमरे की जगह लेते थे, अब कंप्यूटर हथेली में समा सकते थे। 1971 ई. में खोजे गये इंटेल 4004 चिप में कंप्यूटर के सभी जरूरी घटक (कंपोनेन्ट्स) थे- सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट और मेमोरी से लेकर इनपुट, आउटपुट कंट्रोल तक-सिर्फ एक चिप पर।

1981 में आई.बी.एम अपना पहला कंप्यूटर लेकर आई। यह घरेलू उपयोग करने वालों के लिए था। 1984 में एप्पल ने मैकिनटोश बनाया। माइक्रो प्रोसेसर, डेस्कटॉप कंप्यूटर से आगे बढ़कर जीवन के कई क्षेत्रों में आया और दिन-प्रतिदिन के उत्पादों में माइक्रो प्रोसेसर का इस्तेमाल होने लगा।

ये छोटे कंप्यूटर काफी ताकतवर होते हैं। वे आज एक-साथ नेटवर्क को जोड़ सकते हैं जो अंततः इंटरनेट के विकास में काम आए। चौथी पीढ़ी के कंप्यूटर ने माउस, जीयूआई और हाथ से पकड़े जाने वाले उपकरणों का भी विकास किया।

वर्तमान और आगे : कृत्रिम बुद्धि

पाँचवी पीढ़ी के कंप्यूटर उपकरण जो कृत्रिम बुद्धि पर आधारित हैं, अब भी विकास की प्रक्रिया में हैं, हालांकि कुछ उपकरण जैसे आवाज की पहचान (वॉयस रिकॉग्निशन) आज इस्तेमाल किये जा रहे हैं। सुपर कंडक्टर और पैरेलल प्रॉसेसिंग, कृत्रिम बुद्धि को वास्तविकता में बदलने में सहायता कर रहे हैं। परिमाण संगणन (क्वांटम कंप्यूटेशन) और मॉलेक्यूलर व नैनोटेक्नॉलॉजी आनेवाले वर्षों में कंप्यूटर का चेहरा पूरी तरह बदल देगा। पाँचवी पीढ़ी के कंप्यूटर का लक्ष्य ऐसे उपकरणों का विकास करना है जो प्राकृतिक लैंग्वेज इनपुट से संचालित हो सकते हैं और वह स्व-संगठन (सेल्फ-ऑर्गेनाइजेशन) और सीखने के लायक हैं।

कंप्यूटर के प्रकार

(१) पर्सनल कंप्यूटर (पीसी)

मेनफ्रेम: बड़े हार्ड ड्राइव, बहुत अधिक स्मृति क्षमता (रैम), मल्टीपल सीपीयू के साथ चलने वाले कंप्यूटर विभिन्न प्रकार की संगणना करते हैं जो प्रॉसेसर की गति (स्पीड) और मेमोरी के इस्तेमाल पर निर्भर करता है।

सुपर कंप्यूटर: यह कंप्यूटर काफी सारे प्रॉसेसर, एएलयू, मेमोरी (रैम) वगैरह से लैस होता है। आमतौर पर इसका उपयोग वैज्ञानिक शोध-कार्य में किया जाता है। इसकी क्षमता 14,000 माइक्रो कंप्यूटर की होती है।

लैपटॉप: यह पर्सनल कंप्यूटर के समान कार्य करने वाला लेकिन हाथ में उठाकर साथ ले जाने योग्य सुसंबद्ध (कांपैक्ट) कंप्यूटर है। यह नोटबुक के आकार का होता है।

माइक्रो कंप्यूटर: यह बहुत छोटा कंप्यूटर होता है, जो कैमरा में इस्तेमाल किया जाता है। माइक्रो कंप्यूटर ऐसा कंप्यूटर है जिसके सेंट्रल प्रॉसेसिंग यूनिट में माइक्रो प्रॉसेसर होता है। इसकी दूसरी विशेषता है यह माइक्रो फ्रेम और मिनी कंप्यूटर की तुलना में काफी कम जगह लेता है।

पर्सनल डिजिटल असिस्टेंट या पामटॉप (पीडीए)

पीडीए को छोटे कंप्यूटर या पामटॉप के नाम से भी जाना जाता है। इसके कई इस्तेमाल हैं-गणना, घड़ी और कैलेंडर के तौर पर इस्तेमाल, इंटरनेट तक पहुँच, ई-मेल भेजना या प्राप्त करना, वीडियो रिकॉर्डिंग, टाइपराइटिंग व वर्ड प्रॉसेसिंग, एड्रेस बुक के तौर पर इस्तेमाल, स्प्रेडशीट बनाना व उस पर लिखना, बार कोड की स्कैनिंग, रेडियो या स्टीरियो के तौर पर इस्तेमाल, कंप्यूटर गेम्स, सर्वे रिस्पॉन्स की रिकॉर्डिंग और ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम (जीपीएस) वगैरह। नये पामटॉप में कलर स्क्रीन और ऑडियो

क्षमता, मोबाइल फोन के तौर पर इस्तेमाल (स्मार्ट फोन), वेब ब्राउजर या पोर्टेबल मीडिया प्लेयर भी आता है। कई पीडीए इंटरनेट तक, वाई-फाई के इस्तेमाल से इंटरनेट या एक्स्ट्रा नेट तक या वायरलेस वाइड-एरिया नेटवर्क तक भी पहुँच सकते हैं। बहुत सारे पामटॉप में टच स्क्रीन तकनीक का भी इस्तेमाल होता है।

एनालॉग: पुराने, अव्यावहारिक कंप्यूटर: ये भौतिक मात्राओं की गणना करते हैं, जैसे एमीटर, वोल्टेज मीटर वगैरह। एनालॉग कंप्यूटर एक ऐसा उपकरण है जो लगातार भौतिक परिवर्तनों का इस्तेमाल कर संगणना करते हैं जो कि वास्तविक वस्तुओं के एनालॉग होते हैं। एनालॉग कंप्यूटर उदाहरण के लिए गीयर्स के लगातार घूर्णन (कंटीन्यूअस रोटेशन) का इस्तेमाल कर सकते हैं या मशीनी या विद्युत-मशीनी (इलेक्ट्रो मैकेनिकल) हिस्सों के कोणीय गति (एंग्युलर मूवमेन्ट) की सहायता से संगणन (कंप्यूटेशन) करता है।

डिजिटल: ये प्रॉसेसिंग के लिए बायनरी अंकों का इस्तेमाल करते हैं, जैसे पर्सनल कंप्यूटर।

कंप्यूटर जो अंकों (डिजिट) के संदर्भ में आँकड़े (डाटा) संग्रहित करते हैं और खंडित चरणों (डिस्क्रीट स्टेप्स) में एक चरण से दूसरे चरण में प्रॉसेसिंग करते हैं। किसी डिजिटल कंप्यूटर की अवस्था खास तौर पर बायनरी डिजिट (द्विआधारी अंकों) के इस्तेमाल से होता है जो किसी स्टोरेज मीडियम, ऑन-ऑफ स्विच या रिले के मैग्नेटिक मार्कर की उपस्थिति या अनुपस्थिति का भी रूप ले सकता है। डिजिटल कंप्यूटर में अक्षर, अंक और पूरा आलेख भी डिजिटल तरीके से दिखता है। एनालॉग कंप्यूटरों के उलट यह डिजिटल कंप्यूटर किसी भी अवस्था को दिखाने के लिए भारी संख्या में अंकों की सेवा लेकर बारंबारता को बढ़ा सकता है, वह भी क्रमहीन तरीके से छोटे चरणों में।

हाइब्रिड: ये कंप्यूटर डिजिटल और एनालॉग कंप्यूटर की बेहतरीन खूबियों को समाहित रखते हैं। ये वैसे कंप्यूटर हैं जिनमें दोनों ही तरह की (डिजिटल और एनालॉग) कंप्यूटरों की विशेषताएँ होती हैं। इसका डिजिटल हिस्सा आमतौर पर कंट्रोलर की भूमिका निभाता है और तार्किक संक्रियाएँ (डिजिटल ऑपरेशंस) मुहैया कराता है, जबकि इसका एनालॉग वाला हिस्सा सामान्यतः विभेदी गणनाएँ करता है।

मानसिंह मेलगन्दी
वरिष्ठ आशुलिपिक

कामाख्या धाम

ऐसा माना जाता है कि ब्रह्मपुत्र नदी के बीच बने इस जगह पर समाधि में लीन भोले शंकर ने अपना तीसरा नेत्र खोला था। जहां तक नजरें जाती हैं, हर तरफ ब्रह्मपुत्र ही ब्रह्मपुत्र है। इसकी धाराओं से घिरा ये स्थान अत्यंत मनोरम है। कामाख्या आने वालों का ये वैसे भी पसन्दीदा जगह है, लेकिन कौमारी तीर्थ पर आये श्रद्धालुओं के लिए यह जगह खास है। यहां बने शिव मंदिर का इतना महत्व है कि उमानंद के दर्शन के बिना कामाख्या माता के दर्शन का फल नहीं मिलता।

तिलिस्म की धरती, जादू-टोने की जननी, मायावी चेहरे, जहां समयचक्र के साथ पानी का रंग लाल हो जाता है, पहाड़ का रंग नीला। विनाशकारी वेग से डराने वाली लोहित नदी का प्रचंड स्वरूप भी ब्रह्मपुत्र में समाहित होकर शांत पड़ जाता है। नदियों के बीच इकलौते नदी, ब्रह्मपुत्र का विस्तार यहां पहुँचकर अबुझ-अनंत जैसा दिखता है। ऐसा सुनने को मिलता है कि यहां की सिद्धियों में इन्सान को जानवर में बदल देने की शक्ति है। कुछेक के लिए ये भय है और बहुतों के लिए यहां की तांत्रिक सिद्धियों के प्रभावी होने की आश्चर्य। इसलिए तो देवी की देदिव्यमान अनुभूति के साथ श्रद्धालुओं की सैकड़ों पीढ़ियां गुजर गईं, आस्था के कई कालखंड अतीत के हिस्सा बन गये, मगर विराट आस्था की नगरी कामरूप-कामाख्या तांत्रिक विद्या की सर्वोच्च सत्ता के रूप में आज भी प्रतिष्ठित है।

राजा दक्ष की बेटी सती ने पिता के मर्जी के खिलाफ शिवजी से शादी की थी। राजा दक्ष ने जब अपने यहां यज्ञ किया तो उन्होंने शिव और सती को न्यौता नहीं दिया। इसके बावजूद सती अपने मायके गईं जहां पिता ने शिवजी के लिए अपमानजनक शब्दों का

प्रयोग किया जिससे आहत हो सती ने यज्ञ कुंड में कूद कर अपनी जान दे दी। सती की अग्नि समाधि से शिव ने प्रचंड रूप धारणकर लिया। देवी सती के जले हुए शरीर को लेकर कैलाशपति उन्मत्त की भांति सभी दिशाओं को थराने लगे, प्राणी से लेकर देवता तक त्राहिमाम याचना करने लगे। भगवान विष्णु ने तब अपने चक्र से सती के अंगों को काटकर भगवान शंकर के क्रोध को शांत किया।

जिन 51 स्थानों पर सती के अंग गिरे थे, वे स्थान ही आज शक्तिपीठ माने जाते हैं। कामरूप-कामाख्या में देवी का योनि भाग गिरा था, जो देवी का जगत् जननी स्वरूप है। नीलांचल

पर्वत पर बने इस मंदिर को देखने पर ये शिवलिंग के आकार का दिखता है। 51 शक्तिपीठों में इसे सर्वोच्च माना जाता है एवं इसे कौमारी तीर्थ भी कहते हैं। इस शक्तिपीठ को असीम ऊर्जा और अथाह शक्ति का स्रोत माना गया है, इसलिए तंत्र-साधना के लिए इसे ही सर्वाधिक उपयुक्त माना जाता है।

माना जाता है कि जून महीने में देवी रजस्वला

होती हैं। इस दौरान यहां हर साल अम्बुवाची योग पर्व मनाया जाता है, जो कुंभ की तरह विशाल होता है। इस दौरान मंदिर के कपाट बंद रहते हैं। पूर्वमुखी मंदिर के प्रवेश द्वार के दाहिनी तरफ राहु और बायीं तरफ केतु की प्रतिमा है। मंदिर के पहली दहलीज पर गणेश, शिव-पार्वती और श्रीकृष्ण की प्रतिमा हैं। तीन दीपक जलाकर सबसे पहले इन तीन प्रतिमाओं की पूजा होती है। सती की शक्ति और शिव की साधना की धरती की अपनी ही माया है। कहते हैं कि देवताओं से लेकर दैत्यों तक ने इस आदिशक्ति को स्वीकार है।

-अमिताभ पाण्डेय
द.पू.रे./हावड़ा



गांव में बीमारी

अपने लच्छू भाई का भरा-पूरा परिवार है। परिवार में शहर में कमानेवाले लोग हैं तो गांव में रहनेवाले भी हैं। धनाढ्य नहीं हैं पर आर्थिक रूप से बहुत कमजोर भी नहीं हैं। तो, इसी लच्छू भाई के एक चचेरे भाई को खांसी शुरू हुई तो जब परिवार और मुहल्ले भर के अधिकतम ज्ञान और विश्वास के अनुसार हर तरह की खरबिरउआ मतलब जड़ीबूटी का प्रयोग काम न आया तब गांव के बेडिग्री तथाकथित झोलाछाप चिकित्सक गोलू डॉक्टर को बुलवाया गया। अब तक गांव जान गया था कि लच्छू के चचेरे को खांसी हुई है।

गोलू डॉक्टर को पूरा मामला बताया गया कि खांसी कैसे शुरू हुई और क्या-क्या उपाय किए गये। पूरा वाक्या सुनने के बाद उसने डांट और उपदेश के डोज के जरिए उन लोगों की समझ का मनोवैज्ञानिक इलाज किया, तदुपरांत दवाइयां दीं। दुश्मन खांसी भी ज़िद पकड़कर बैठ गई थी। खांसी ठीक नहीं हुई तो उसने शहर में चिकित्सा के लिए रेफर कर दिया।

शहर के डिग्री धारी चिकित्सक ने दवाएं लिखी और खून जांच कराने को कहा। इलाज से भी जी बहाल न हुआ तब खून की जांच भी करवाई गई। माना गया कि इसके बाद डॉक्टर थूक जांच कराने और फोटो कराने को कहेगी। आम तौर पर गांव के लोग समझते थे कि दवा से रोग ठीक न हो तो खून, थूक जांच और फोटो, मतलब 'एकसारा' (एक्सरे) करा लेने से रोग ठीक हो जाता है। पर डॉक्टर ने जांच करवाकर फिर मिलने को कहा था। लोग कहने लगे कि जांच तो करा लिया, अब डॉक्टर पैसा ऐंठना चाहता है, इसीलिए बुला रहा है। सो, डॉक्टर से मिलना कैंसिल (कैंसल) कर दिया गया।

खांसी अपनी उपस्थिति दिन-रात दर्ज करवाती रही। माना गया कि अचानक ही थोड़े खांसी ठीक होगी, दो-चार दिन तो लगेगा। सप्ताह भर बाद गोलू डॉक्टर को समन गया। वह आया। पूछा गया, तुम्हारा खेत काटे थे कि तुम्हारी भैंस खोल ले गए थे, कि ऐसे डॉक्टर के पास रेफर किए। गोलू डॉक्टर सारा माजरा समझ गया। उसने रिपोर्ट भी देखा और बताया कि जांच कराने से रोग का पता चलता है। इलाज कराने से रोग ठीक होता है। उसने फिर डांट और उपदेश का डबल डोज दिया, क्योंकि यह भी जताना जरूरी था कि केवल खेत काटना और भैंस खोलना ही तापमान बढ़ाने के कारण नहीं होते। हालांकि गोलू ने रिपोर्ट देखकर बताया था, पर शहर के डॉक्टर के कहने पर पक्का हो गया कि लच्छू का चचेरे भाई टीबी को प्रिय हो गया है। अब तक तो लोग इसे खांसी ही समझ और बता रहे थे, लेकिन चूंकि गांव में कुछ लोग पहले अलग-अलग तकलीफों के लिए इलाज करा चुके थे और गांव में कुछ लोग बिना अंग्रेजी वाले मैट्रिक थे तो कुछ लोग अंग्रेजी वाले भी थे और नमक-मिर्च की भी परंपरा थी, सो मुहल्ला और आस-पास के मुहल्लों में चर्चा चली कि लच्छू भाई के चचेरे भाई को कोई गंभीर बीमारी है। इस बीच पता नहीं कब चर्चित बीमारी का कैरेक्टर ढीला हो गया। कुछ लोगों के लिए बीमारी का नाम एड्स था, कुछ के लिए कैंसर। और भी पता

नहीं कौन-कौन-से नाम दिए गए।

पहले घनिष्ठ बीमार के घर धाए आए। बीमार का हाल का सर्वे किया। परीक्षण के रिपोर्ट पर माथा खपाया। एक ने कहा, पहले ही शहर के डॉक्टर के पास क्यों नहीं गए? ई गोलुआ खाली सूई देना जानता है, इसको कुछ आता है?

जवाब दिया गया।

अलग-अलग लोगों के तरह-तरह के सवाल और सलाहों का सिलसिला चल पड़ा। इधर लच्छू ने भी आनेवाले लोगों के चाय-पानी का उचित प्रबंध कर दिया था, सो, चाय-पानी की व्यवस्था भी मुहल्ले में चर्चा का विषय बन गई। लोग प्रशंसा कर रहे थे और प्रशंसा लच्छू तक भी पहुंच रही थी, तो पूरा परिवार भी प्रशंसा जनित गर्व महसूस कर रहा था। उधर चाय-पानी अधिक से अधिक लोगों को मरीज का हाल जानने के लिए आकर्षित कर रहा था।

लोगों का मरीज देखने आना और मेहमाननवाजी करवा कर प्रस्थान करना शुरू हुआ। मिक्सचर -बिस्कुट- पानी -चाय के प्रकट होने से अंतर्धान होने तक के बीच लोग लगभग एक जैसे ही सवाल पूछते और तब तक की कहानी बताई जाती और आगंतुक द्वारा उसके अधिकतम ज्ञान और विश्वास के हिसाब से परामर्श दिया जाता और/अथवा इलाज निःशुल्क बताया जाता। चचेरे भाई के एक मोबाइल प्रिय भतीजे ने तो बार-बार एक जैसा नाश्ता परोसने और एक जैसी कहानी बयान करने के कष्ट को कम करने के लिए प्रस्ताव भी रख दिया कि नाश्ते का पैकेट बना कर रख लिया जाए और अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्न जैसा कुछ रिकॉर्ड कर रख लिया जाए, जिसे हर शाम को अपडेट कर दिया जाए, लेकिन किन्हीं अज्ञात कारणों से प्रस्ताव पारित न हो सका। इधर दवा चल रही थी तो दूसरी तरफ बीमार पर परिचर्या और परिचर्चा का मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी हो रहा था।

इतने लोगों का आना भी बहुत सम्मान की बात बताई जा रही थी। इसलिए लच्छू के गर्व के अब दो कारण थे।

इस बीच एलोपैथी के साथ-साथ होम्योपैथी, आयुर्वेदिक और खरबिरउआ इलाज भी चलता रहा और अगले बीस-पच्चीस दिन के बाद खांसी ने पिंड छोड़ दिया।

गोलू डॉक्टर को खबर दी गई। इस बार गोलू डॉक्टर ने ही खून, थूक जांच और एक्स-रे कराने को कहा। खुद मरीज के साथ गया। रिपोर्ट में टीबी का संकेत नहीं था। गोलू डॉक्टर फिर सवाल के घेरे में। ऐसा कैसे हो गया?

बाद में क्या हुआ यह तो ठीक-ठीक पता नहीं चल पाया, लेकिन कोई कह रहा था कि पहली बार जब लच्छू के चचेरे भाई का खून जांच कराया गया था, तब शायद सैंपल किसी दूसरे के सैंपल के साथ बदल गया था।

- मुन्ना सिंह

देशों की सीमा रेखा

काफी रोमांचक है देशों की सीमाएं बनने की कहानी। देशों का नक्शा हर सदी में बदलता रहा है।

सीमाओं के बनने-बिगड़ने में व्यापार का भी योगदान है। वैश्विक महामारी कोरोना के कहर से दुनिया भर के देश जूझ रहे हैं। लेकिन इस विश्वव्यापी चुनौती के सामने भी विभिन्न देशों का राष्ट्रवाद और मजबूत होकर सामने आ रहा है। अमेरिका लगातार चीन पर वायरस फैलाने के आरोप लगा रहा है तो कई देशों ने रूस पर कोरोना वैक्सीन के शोध में सेंधमारी का आरोप लगाया है। आज दुनिया को जब हम ग्लोब पर देखते हैं, क्या ये हमेशा से ऐसी थी? अगर नहीं तो देशों की सीमाएं कैसे बनीं?

इन देशों की सीमाओं के बनने की कहानी उतनी ही रोमांचक है, जितनी दुनिया में इंसानों के आने की कहानी। कालांतर में इंसान एक झुंड में रहने लगे। इसी रहन-सहन के दौरान इंसानों ने विभिन्न चीजों पर अधिकार जताना शुरू किया। इंसानों की जरूरतें और महत्वाकांक्षाएं व्यक्तिगत से सामाजिक होती गईं। ज्ञात स्रोतों के अनुसार आज इंसानी सभ्यता अपने शिखर पर है। आज भी जब राष्ट्रीय सीमाओं की बात आती



है तो इन मसलों को युद्ध जैसे हिंसक तौर-तरीकों से निपटाते हुए देखा जा सकता है। हाल ही में भारत और चीन के बीच गलवान घाटी में हुई हिंसा इसी का एक उदाहरण है।

किसी देश का निर्माण सबसे पहले इंसानी दिमाग में ही होता है। अपने देश भारत का ही उदाहरण लें तो ब्रिटिश शासन के अधीन यह एक राष्ट्र था। बाद में इसमें भारत और पाकिस्तान दो राष्ट्र बने। आजादी मिलने के बाद 1947 में भारत का एक हिस्सा धर्म के आधार पर अलग होकर पाकिस्तान बन गया। हालांकि, इसके बाद भी 1971 में पाकिस्तान से टूटकर एक और अलग राष्ट्र बांग्लादेश बना। पूर्वी पाकिस्तान (बांग्लादेश) और पश्चिमी पाकिस्तान में एक ही धर्म होने के बावजूद कुछ लोगों को

सांस्कृतिक भिन्नताओं की वजह से अलग राष्ट्र बनाने का ख्याल आया। कारण चाहे जो भी हो, राष्ट्रीय सीमाओं का सिद्धांत सबसे पहले इंसानी दिमाग में ही जन्म लेता है और फिर हकीकत बनता है। आज दुनिया में 193 देश हैं जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हैं। भारत-पाक के 1971 के युद्ध के बाद अलग राष्ट्र बांग्लादेश का निर्माण हुआ।

इंसान आदिम काल में घुमंतू तरीके से जीवन यापन करते थे। जब से इंसान एक जगह पर रहने लगे, उन्होंने खेती और पशुपालन भी शुरू किया। इसके बाद ही विभिन्न जगहों पर सीमाएं बननीं शुरू हुईं। खेती योग्य भूमि, कबीलों, रिहाइशी इलाकों आदि का निर्धारण सीमा बनाने से ही शुरू हुआ। इस तरह का जीवन जीते हुए समाज में अतिरिक्त उत्पादन हुआ और दूसरी जरूरी चीजों को लेकर व्यापार शुरू हुआ। यहीं से इंसानी समाज

में संपत्ति का विचार भी आया। इसके बाद संपत्ति पर अधिकार जताने की भावनाएं पैदा हुईं। समय बीतने के साथ ही व्यापार को लेकर, सीमाओं के विस्तार और पुनर्निर्धारण को लेकर युद्ध भी लड़े गए।

पूंजीवाद का आगमन 16वीं सदी में माना जाता है। दुनिया में देशों की आधुनिक सीमाएं करीब 500 साल पहले निर्धारित होनी शुरू हुईं। हालांकि, इससे पहले भी राष्ट्रों की सीमाएं युद्ध के जरिए बदलती रहीं। लेकिन इसी समय में इनके निर्धारण में तेजी आई और यह स्थायी चीज बन गई। अगर हम अलग-अलग सदियों में दुनिया का नक्शा देखें तो यह हर बार बदलता हुआ महसूस होता है। इस प्रक्रिया के दौरान दुनिया भर में लोगों पर शासन करने का तरीका भी बदलता गया। जैसे- पहले देशों पर राजा शासन करते थे और बाद में लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गई सरकारें शासन करने लगीं।

16वीं सदी में पूंजीवाद के आगमन के साथ ही जब बड़ी व्यापारिक कंपनियां बनीं तो उनको अपने व्यापार को सुविधाजनक बनाने के लिए एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र के भीतर कई चीजों की जरूरत महसूस हुई। इनमें सड़कें, टैक्स सिस्टम और एकीकृत संचार व्यवस्था जैसी चीजें शामिल हैं। इसी बीच एक देश के लिए चार अहम चीजों-निश्चित क्षेत्र, जनसंख्या, संप्रभुता और सरकार का विचार सामने आया। इस प्रणाली ने भी राष्ट्रों की सीमाओं के निर्धारण में अहम भूमिका निभाई।

हर सदी में अलग-अलग इलाके सभ्यता, कला, संस्कृति, आविष्कार, समृद्धि आदि के मामलों में दुनिया पर अपना परचम लहराते रहे हैं। अगर हम 13वीं सदी में अरब देश स्पाइस रूट, व्यापार, कला की वजह से दुनिया का नेतृत्व करता रहा। इसके बाद स्पेन और पुर्तगालियों ने अरब के एकाधिकार को तोड़ने के लिए अपने प्रतिनिधियों को वहां भेजा। हालांकि 18वीं सदी में औद्योगिक क्रांति और आविष्कार के बाद पूंजीवाद का और तेजी से प्रसार हुआ। इसके बाद यूरोप दुनिया के बाकी इलाकों से आगे हो गया। फिर दुनिया ने ब्रिटेन और फ्रांस का नेतृत्व देखा और 20वीं सदी के बाद से अमेरिका सबसे आगे हो गया। अलग-अलग कालखंडों में ये देश न सिर्फ व्यापार में आगे रहे बल्कि इन्होंने राष्ट्रों के निर्माण, सीमाओं के निर्धारण और अंतरराष्ट्रीय राजनीति में अहम भूमिका निभाई।

राष्ट्रीयता और सीमाओं का सिद्धांत जब से पनप रहा था, तभी से यह अपने आप में काफी विरोधाभास और विडंबनाएं लेकर चल रहा है। दुनिया भर में इस दौरान लोकतंत्र और उपनिवेशवाद एक साथ चलता रहा। जब ब्रिटेन में 1688 में रक्तहीन क्रांति हुई तो राजा को शक्तिहीन बना दिया गया और असली सत्ता संसद के हाथों में आ गई। लेकिन इसके साथ ही ब्रिटेन का उपनिवेशवाद जारी था। ब्रिटेन ने अपने लोगों के लिए लोकतंत्र का सबक रखा और साथ में दूसरे देशों पर उसका राज करना भी जारी रहा। वर्ष 1874 तक ब्रिटेन की औपनिवेशिक नीतियों की प्रतिनिधि-ईस्ट इंडिया कंपनी भी चलती रही। यही नहीं, हॉन्गकॉन्ग तो अभी 1997 तक भी ब्रिटेन की कॉलोनी बनकर रहा और इसके बाद उसकी संप्रभुता चीन को स्थानान्तरित की गई।

बॉर्डर बनने की दुनिया भर में बड़ी अजीब प्रक्रियाएं रही हैं। यूरोप में कुछ लोगों ने एक कमरे में कुर्सी और मेज पर बैठकर अफ्रीका की सीमाओं का निर्धारण किया है। इस तरह देशों के बनने

की प्रक्रिया में हमें स्पष्ट तौर पर औपनिवेशिक सोच देखने को मिलती है। दुनिया में पहले विश्व युद्ध के बाद मैनडेट सिस्टम सामने आया। यह युद्ध की समाप्ति के बाद आधिकारिक तौर पर अंतरराष्ट्रीय उपनिवेशवाद को स्वीकृत करने वाली घटना थी। मैनडेट सिस्टम यानी जो देश आजाद होने वाले थे या जिनको अभी आजादी देने या स्वयं देश चलाने योग्य नहीं माना गया, उनका संचालन दूसरे बड़े देशों के हाथों में दे दिया गया ताकि वे आजादी लेने और स्वयं देश चलाने लायक सभ्य हो सकें।

सीमाओं के बनने की प्रक्रिया आज समाज में काफी माइक्रो लेवल तक पहुंच गई है। हम रोजमर्रा की जिंदगी में इससे रूबरू होते हैं। उदाहरण के तौर पर तहसील, जिले, राज्यों की सीमाएं प्रशासनिक सुविधा के लिहाज से बनाई गई हैं तो दूसरी ओर समाज में मल्टीस्टोरी हाउसिंग।

प्रोजेक्ट और उसके बाहर झुगियों का भी बंटवारा देखने को मिलता है। सीमा निर्धारण का उदाहरण कोरोना काल में भी कंटेनमेंट जोन के रूप में भी देखने को मिलता है।

साउथ एशियाई देशों में से ज्यादातर देशों का इतिहास और संस्कृति एक साथ विकसित हुई है। इस हिस्से में रहने वाले लोग पहले बिना किसी रोक-टोक के एक-दूसरे के यहां व्यापार, अध्ययन, भ्रमण जैसे मकसद से आते-जाते रहे हैं। आज विडंबना यह है कि अब यह आवागमन रुक गया है। भारत में बांग्लादेश से आए लोग हों या पाकिस्तान से आए लोग, आज उन्हें अगर अपने पूर्वजों का देश देखना हो तो वह संभव नहीं है। इसकी वजह है कि वहां जाने पर शहरों की सीमा के हिसाब से वीजा की आवश्यकता होती है। इसी दुनिया में ऐसी व्यवस्था भी बनाई गई है, जहां बिना रोक-टोक के दर्जनों देशों में आया-जाया जा सकता है। जैसे- यूरोप में इंटरनल बॉर्डर सिस्टम को मंजूरी दी गई है, यहां पर एक ही वीजा से कई देशों में घूमा जा सकता है।

एक देश बनने के लिए सबसे पहले लोगों की जरूरत पड़ती है। परन्तु देश को चलाने वाली सत्ताएं हमेशा देश का निर्धारण सीमाओं से तय करती हैं। अगर कभी आप किसी इंटरनेशनल फ्लाइट में बैठे हों और हवाई जहाज से नीचे की ओर देखें तो आपको कहीं भी किसी देश की सीमा नहीं दिखाई देगी। ये आपको एक बार यह अहसास जरूर दिलाता है कि धरती पर ये सीमाएं इंसानों ने खुद बनाई हैं और वे आज भी अक्सर इन्हीं के लिए लड़ते-झगड़ते रहते हैं।

- ऋत्विक् सिन्हा

शक्तिपात

यह कहानी तब की है, जब भुवनेश्वर में कलिंग स्टेडियम की जगह ग्वालों की खटालें आबाद थीं। आसपास के लोग शुद्ध दूध पाने के लिए तड़के उन खटालों पर जा धमकते और अपनी आंखों के सामने दूध दुहवाकर ले जाते। वह दूध काफी गाढ़ा होता और पहली मलाई काढ़ने के बाद उससे हर पखवाड़े पावभर घी निकल आता। यह बात अलग है कि ग्वाले इन सबके बावजूद अपनी कारस्तानी से बाज नहीं आते। वे अपनी खटालों पर गोबर और गोमूत्र इस तरह फैलाकर रखते कि गाय और ग्राहक के बीच एक सुरक्षित दूरी बन जाती और पानी मिलाने का पर्याप्त अवसर मिल जाता। वर्षा ऋतु में तो उनकी बांछें खिल जातीं। तब गायें झोपड़ी में ही रहतीं। परिणामस्वरूप ग्वालों की मनमानी चरम पर पहुँच जाती और वे सारी कसर निकाल लेते।

सौम्यरंजन विश्वाल और मेघनाद नायक ए. जी. ऑफिस में सहायक लेखा अधिकारी थे। वे दोनों न्यू ए.जी. कॉलोनी के टाइप श्री क्वार्टर्स में आमने-सामने रहते थे। इस नाते जितने अच्छे मित्र थे, उतने ही अच्छे पड़ोसी भी थे। दोनों तड़के उठते और खीर लाने के लिए माधव बेहेरा नामक ग्वाले की खटाल की तरफ निकल पड़ते। दूध को ओड़िया में खीर कहते हैं, जो संस्कृत शब्द क्षीर से व्युत्पन्न है। एक बात और, ओड़िया में अकारांत शब्द के अंत्य अकार का पूरा उच्चारण किया जाता है। इसलिए खीर नहीं बल्कि खीर बोलते हैं। हां, तो सदैव की तरह दोनों मित्र सबेरे छह बजे माधव बेहेरा की खटाल जा पहुँचे।

विश्वकर्मा पूजा के साथ शरद ऋतु दस्तक दे चुकी थी। आसमान से बादल छूटने लगे थे। धरती पर कीचड़ सूखने की प्रक्रिया अब तक शुरू नहीं हो पाई थी। पवन के मंद झोंके देह सिहरा रहे थे। मौसम रुमानी हो चला था। सड़क किनारे बने मंगला माता के मंदिर के लाउडस्पीकर से महात्मा के अवसर पर चंडी पाठ की आवाज आ रही थी।



कहानी आगे बढ़ाने के पूर्व बेहतर होगा कि आप माधव बेहेरा से परिचित हो लें। एक निर्धन दुग्ध व्यवसायी होने के कारण वह उतना ही ईमानदार था, जितना उसके अन्य प्रतिस्पर्धी थे। इसी ईमानदारी से आशंकित उसके ग्राहक उसके खटाल पर जाकर खीर लाना श्रेयस्कर समझते थे। वह सौगंध खाकर खीर शत-प्रतिशत शुद्ध होने की गारंटी देता मगर उसकी गारंटी उतनी ही पक्की होती, जितना पाकिस्तान द्वारा किसी आतंकी को अपने देश में प्रश्रय न देने की गारंटी देना। यही वज्रह थी कि लोग उसे गालुआ माधव कहकर पुकारते।

जब सौम्यरंजन बाबू और मेघनाद बाबू माधव के खटाल पर पहुँचे तो वहाँ समरांगण सजा देखकर चौंक उठे। माधव अपनी

पत्नी बासंती को एक डंडे से पीट रहा था और वह भी भरपेट उसे गंदी से गंदी गालियाँ देकर प्रतिरोध कर रही थी। आसपास वाले ग्वाले मजे से उन्हें घेरकर जात्रा का आनंद उठा रहे थे। उनकी छोटी बेटी झिलमिली अपने बाप का रौद्र रूप देखकर जोर-जोर से रोए जा रही थी। गोमाता भी यह अनर्थ घटित होता देख, रस्सी से बंधे होने

के कारण विवश भाव से हुंकार रही थी। यह अप्रत्याशित दृश्य देखकर मेघनाद बाबू कुपित हो गए और जोर से माधव को डांटा, “सबेरे-सबेरे यह क्या गंडगोल (झमेला) लगा रहा है? छोड़ो इसे, स्त्री को इस तरह मारते हैं क्या? लज्जा नहीं आती?”

माधव मेघनाद बाबू से डरता था, क्योंकि उनसे समय-असमय वह पैसे उधार लेता रहता था। अगर वे उसकी रुपये-पैसे से सहायता न करें तो उसके पास बची एकमात्र गाय भी बिक जाएगी। परिणामस्वरूप उसे दाने-दाने को आश्रित होना पड़ेगा। वह भुनभुनाता हुआ पीछे हट गया और अपनी पत्नी की शिकायत करने लगा तो मेघनाद बाबू ने दोबारा उसे डाँटते हुए कहा, “अपना आपस का झगड़ा खुद सुलझाओ मगर झोपड़ी के अंदर, शांति से मिल-बैठकर। उसकी शिकायत मुझसे करने से क्या लाभ होगा? हम स्त्री और स्वामी के झगड़े में पड़कर क्यों अपना

समय बरबाद करें? चलो, जल्दी से खीर निकालकर दो, हमें आज जल्दी कार्यालय जाना है।”

झगड़ा निपटता देख तमाशबीनों की मायूस भीड़ तत्काल वहां से छुट गई। माधव ने बेमन से बाल्टी उठाई और गाय के पास पैर के पंजों के बल बैठ बासंती से कहा कि वह गाय के पिछले पांवों में दामनी(रस्सी) बांध दे और घुटनों के बीच बाल्टी फँसाकर दूध दूहने लगा। यह बात अलग है कि बासंती ने उसकी आज्ञा एक कान से सुनी और दूसरे कान से निकाल दी। वह वहीं बैठी-बैठी बिसूरती रही। उसने गाय के पीछे वाले पैरों को रस्सियों से बांधा ही नहीं।

मेघनाद बाबू बोले, “हरि-हरि, भला किसी स्त्री को ऐसे मारते हैं क्या? अरे, आज महालया से तो महाशक्ति का पूजन आरंभ होता है। माता क्या सोच रही होंगी कि मेरी पुत्री को यह कौन दुष्ट मार रहा है! माधव, तुमने यह बड़ा बुरा काम किया। तुम्हें बासंती से क्षमा मांगनी चाहिए।”

मेघनाद बाबू का मुखर प्रश्रय पाकर बासंती की आंखों में रक्त उतर आया। प्रतिरोध भाव से वह धधक उठी। माधव को उसकी धृष्टता का उत्तर देने के लिए वह इधर-उधर किसी साधन की तलाश करने लगी। अचानक उसकी दृष्टि सामने पड़े उस डंडे पर पड़ी, जिससे उसका स्वामी उसे कुछ समय पहले धुन रहा था। उसने आव देखा न ताव, माधव द्वारा फेंके गए डंडे को जमीन से उठाया और माधव की ओर कुपित भाव से लपकी और उसकी पीठ पर दनादन तीन-चार डंडे दे मारे। उधर बासंती को डंडा लेकर अपनी ओर दौड़ते हुए देख गाय भ्रम में पड़ गई। उसे लगा कि बासंती मुझे मारने आ रही है। बिदक कर उसने जोर से एक लताड़ माधव को मारी और सींग निकालकर बासंती की ओर लपकने लगी। अगर वह खूँटे से न बँधी होती तो आज उसका तांडव बासंती को भारी पड़ जाता। मगर यह सौभाग्य माधव को नहीं मिला।

एक तो पीठ पर पत्नी द्वारा दनादन तीन-चार डंडे पड़े और छाती पर भी गाय की तगड़ी लताड़ पड़ गई। परिणाम यह हुआ कि बेचारा गोबर की ढेर पर जा गिरा और बाल्टी उसके सिर से जा फँसी। गोबर की ढेर गोमूत्र के कारण वैसे ही गीली थी। अब बाल्टी में भरा दूध भी गोबर से पुते जमीन में आ मिला। इस कारण जितनी बार भी वह उठने की चेष्टा करता, उतनी ही बार उसके पैर फिसल जाते और वह गोबर में फिर से लिथड़ जाता। यह सीन देखकर सारे लोग ठहाके मारकर हँसने लगे और माधव के होठों से गालियां

मशीनगन की गोलियों की तरह छूटने लगीं।

किसी तरह वह उस नारकीय दशा से छुटकारा पाकर बाहर निकला तो उसे भूत बना देख झिलमिली ताली बजाकर हँसने लगी। उसे हँसते देख माधव का माथा गरम हो गया। उसने बासंती से डंडा छीना और अपशब्द बोलते हुए एक डंडा उसे दे मारा, फिर अपना उपहास उड़ाने का दंड देने के लिए झिलमिली की ओर झपटा।

अपने बाप को अपनी ओर झपटते देख कर झिलमिली आतंकित हो गई। अपनी जान बचाने के लिए उसने गाय की रस्सी खोल दी। गाय को रोज नून-भात खिलाकर उसने गाय का मन जीत रखा था। आज गाय को उसका ऋण उतारने का मौका मिल गया। वह नथुने से आग उगलती हुई माधव की ओर दौड़ी और उसे ढाही मारकर फेंक दिया। मानो एक ढाही मारकर उसे संतोष न मिला हो, वह फिर माधव पर चढ़ दौड़ी। माधव इस बार उसका रौद्र रूप देखकर सहम गया और उठकर पड़ोसी की खटाल की ओर भागा। तत्क्षण खटालों में भगदड़ मच गई। लोग जान बचाने के लिए इधर-उधर भागने लगे। उधर गाय माधव को खटालों से रगेदते हुए रोड तक जा पहुँची। और कोई चारा न देख माधव अपने प्राण बचाने के लिए लैम्प पोस्ट पर चढ़ गया। दूसरी ओर चंडीपाठ बदस्तूर जारी था : “महिष की छाती में रणचंडी ने त्रिशूल से वार किया और जोर से गर्जना की। तत्काल ही महिषासुर विशाल भैंसे के रूप में परिणत हो गया। उसकी सींग आकाश को छू रही थी। वह एक उत्तुंग पर्वत की तरह भयानक प्रतीत हो रहा था। वह फुँफकारते और धरती को कँपाते हुए देवी की ओर दौड़ा। देवी ने तत्काल तीखी कटार से उसके सिर पर प्रहार कर उसकी गति स्तंभित कर दी। देवी के इस शक्तिपात के कारण दैत्य कुछ क्षण के लिए मूर्च्छित हो गया।”

सौम्यरंजन बाबू और मेघनाद बाबू ने महालया का प्रकरण साक्षात् अपनी आंखों से देखा तो समझ गए कि आज नींबू चाय से ही काम चलाना पड़ेगा। वे हँसते हुए खाली हाथ ही अपने डेरे की ओर लौट पड़े। माधव उन्हें टुकुर-टुकुर लौटते हुए देखता रहा। उसके अंग-प्रत्यंग दर्द से पिरा रहे थे, तथापि वह लैम्प पोस्ट से नीचे उतरने का साहस न जुटा पाया क्योंकि क्रोध से धधकती रणचंडी बनी गोमाता अब भी उस लैम्प पोस्ट के चारों तरफ हुंकारते हुए चक्कर काट रही थीं।

- विमल किशोर मिश्र

अवसर

आज मानव जीवन बड़ा ही भाग-दौड़ वाला हो गया है, जीवन में नाना प्रकार की समस्याएं पैदा हो गई हैं। मनुष्य अपने जीवन को सुखी रखने के लिए हर प्रकार के अवसर की तलाश में रहता है, लेकिन मनुष्य के जीवन में यह अवसर कभी-कभार ही आता है। परंतु बहुत से अवसर ऐसे होते हैं कि मनुष्य उसका लाभ गलत ढंग से उठाता है, लेकिन सभी मनुष्य एक जैसे नहीं होते हैं, जैसे तुलसीदास ने अपने दोहा में लिखा है कि

जाकि रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखिन्ह तिन तैसी।

साथियों, अब मैं अपने दो पात्रों 'आनंद' और 'सुरेश' की कहानी सुनाने जा रहा हूँ जिसमें दिखाया गया है कि ये दोनों अपने जीवन में अवसर मिलने पर किस ढंग से लाभ उठाते हैं। आनंद और सुरेश दोनों कोलकाता शहर में काम करते थे। आनंद सरकारी नौकरी करता था जबकि सुरेश का बड़ाबाजार में कोई व्यवसाय था। इन दोनों के घर भी एक जगह थे। इसी कारण दोनों में धीरे-धीरे काफी दोस्ती हो गई।

संयोगवश आनंद एक बार बहुत बीमार पड़ गया। उसे अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। उस बीमारी के दौरान उसकी देखभाल करने वाला और कोई नहीं बल्कि सुरेश ही था। आनंद सात दिनों तक अस्पताल में भर्ती रहा उस बीमारी के दौरान सुरेश अपना सारा कारोबार छोड़कर अस्पताल की दौड़ लगाता रहा। आनंद की बीमारी की खबर मिलने पर उसके मम्मी-पापा को आने में चार दिन लग गये। आनंद की बीमारी के समय उसकी देख-रेख में सुरेश का इतना बड़ा योगदान देखकर उसके मम्मी-पापा अति प्रसन्न हुए।

आनंद के पिता ने सुरेश से कहा, 'बेटा, तुम जिस तरह से आनंद के मुसीबत में काम आये हो इसके लिए मेरे पास धन्यवाद देने के लिए कोई शब्द नहीं है, अगर भगवान की कृपा हुई तो अवसर मिलने पर मैं इस उपकार का कर्ज जरूर उतारूंगा।

धन्यवाद अंकल, यह तो आपकी महानता है, परन्तु यह शब्द कहकर आप मुझे लज्जित कर रहे हैं, आनंद तो मेरा जिगरी दोस्त है। दोस्त से बढ़कर इस दुनिया में कौन होता है। अगर मैं उसकी जगह होता तो वह भी वही करता जो मैंने किया। अंकल इस विषय पर आपको ज्यादा भावुक होने की आवश्यकता नहीं है। मैंने तो वही किया है जो एक इंसान का कर्तव्य होता है।

सुरेश बेटा, आनंद की शादी मैं इसी साल करने वाला हूँ। उस अवसर पर तुम जरूर आना। तुम्हें मैं अभी से आमंत्रित कर रहा हूँ।

मैं जरूर आऊंगा अंकल, आप हमें आमंत्रित करें और हम न

आएं, ऐसा कभी हो नहीं सकता। आनंद की तरह मैं कोई सर्विस वाला थोड़े ही हूँ। मैं तो एक छोटा-मोटा व्यापारी हूँ। मुझे आनंद की तरह कार्यालय में छुट्टी का आवेदन थोड़े ही देना है।

धन्यवाद बेटा। मैं तुम्हारे जैसा आनंद का दोस्त पाकर बहुत खुश हूँ। लेकिन, मैं कल वापस जा रहा हूँ। तुम आनंद के स्वास्थ्य पर ध्यान देना क्योंकि अस्पताल से आने पर इसे काफी कमजोरी महसूस हो रही है। इसके खान-पान पर विशेष ध्यान देना।

आनंद की शादी का दिन निकट आ गया। सुरेश को भी निमंत्रण कार्ड मिल गया। वह निर्धारित समय पर शादी में उपस्थित हो गया। शादी खूब धूम-धाम से हुई। आनंद की शादी के बाद दोनों कोलकाता के लिए रवाना हो गये। सुरेश कोलकाता पहुँच तो गया परन्तु गहने का जो चढ़ावा मंडप में लड़की को दिया गया था उसे वह भूल नहीं पाता था। उस दिन से उसके मन में खोट पैदा होना आरंभ हो गया।

जब मनुष्य के मन में कोई दुर्बुद्धि उत्पन्न होती है तो वह गलत ढंग से प्रयोग करना शुरू कर देता है। संयोग ऐसा हुआ कि एक दिन सुरेश ने आनंद का मोबाइल चुरा लिया। आनंद ने अपने मोबाइल के लिए काफी छान-बीन किया।

पापा, मैं यहां पर बहुत मुसीबत में फंस गया हूँ। इस फोन पर सभी बातें कहना उचित नहीं होगा। मैं अपने दोस्त सुरेश को आपके पास भेज रहा हूँ। वहां पर उसी के द्वारा सब कुछ मालूम हो जाएगा।

सुरेश ने बताया कि हाथ में पैसे न होने के कारण विवाह के लिए जो जेवर खरीदे गये थे दरअसल वे दस दिन के मोहलत पर उधार में लिए गये थे, पर उसने यह नहीं बताया कि अवसर का लाभ उठाते हुए उसने आनंद के घर से जेवर के लिए आनंद द्वारा जुगाड़े गए पैसे एवं मोबाइल दोनों ही आनंद के घर से चुरा लिए थे जिसके कारण आज आनंद को कानून के शिकंजे में आना पड़ा है। आनंद के पिता ने जब कठोरता से इसकी जांच पड़ताल की तो सुरेश टूट गया और अपना अपराध कबूल कर लिया। कोलकाता वापस होने के दौरान अपने इस मित्रघात के कृत को वह पचा नहीं पाया और मानसिक संताप के कारण वह ट्रेन दुर्घटना के शिकार हो गया। दूसरे दिन के समाचार पत्र में प्रकाशित अज्ञात मृत व्यक्ति के फोटो से यह पता चल पाया कि अब सुरेश इस संसार में नहीं है।

- किशोरी प्रसाद चौरसिया
प्राध्यापक, पूर्व रेलवे, हावड़ा

कोविड-19 : क्या करें और क्या न करें ?

कोविड-19 महामारी से बचाव के लिए कुछ सरल शिष्टाचार तैयार किया गया है जो अभी के लिए, बुनियादी क्या करें और क्या न करें स्टार्टर के रूप में काम कर सकते हैं और अपनी सुरक्षा सुनिश्चित कर सकते हैं :

सभाओं/समारोह का शिष्टाचार:

- उचित दूरी के उपायों के साथ एक स्थान पर भोजन परोसें। सभाओं के लिए खुले लॉन और बड़े स्थान हमेशा सुरक्षित होते हैं।
- किसी सभा की मेजबानी करते समय कुछ अतिरिक्त मास्क हाथ में रखें। यदि आप मेजबान हैं, तो सुनिश्चित करें कि प्रवेश/निकास या अन्य प्रमुख स्थानों पर उचित हैंडवाशिंग स्टेशन और सैनिटाइज़र की पर्याप्त आपूर्ति है।
- छोटे, संकुचित या खराब हवादार स्थानों में सभा/समारोह की योजना न बनाएं।
- मेहमानों की संख्या कम से कम रखने की कोशिश करें और कोविड-19 पर सरकार के दिशा-निर्देशों के साथ तालमेल बिठाने की कोशिश करें। आभासी समारोह आदर्श और बेहतर हैं।
- अगर आपमें कोविड-19 के लक्षण दिखाई दे रहे हैं, तो सभाओं में शामिल न हों। दोस्तों और परिवार से मिलने से पहले 14 दिनों के लिए सेल्फ आइसोलेशन में रहें और उन लोगों को सूचित करें जिनके संपर्क में आप आए होंगे।
- समारोहों में भाग लेने के लिए दोस्तों या रिश्तेदारों पर दबाव न डालें। यदि वे सभा में भाग लेने में सहज नहीं हैं, तो उनके निर्णय का सम्मान करें।

अभिवादन का शिष्टाचार:

- लोगों का अभिवादन करने की अपनी पुरानी आदत को छोड़ दें। हाथ मिलाना, गले लगाना, चुंबन, ये सभी काफी खतरनाक हैं और जब तक आप एक साथ नहीं रहते और लगातार संपर्क में रहते हैं, इससे असुरक्षित हो सकते हैं।
- लोगों को एक लहर, पारंपरिक नमस्ते या आदाब, या एक कोहनी टक्कर के साथ अभिवादन करके अपना सम्मान दिखाएं। शारीरिक संपर्क जितना कम होगा, वह उतना ही सुरक्षित होगा।

टीकाकरण के आसपास शिष्टाचार:

- अपने आप को पूरी तरह से टीका लगवाएं और अपने टीकाकरण की स्थिति के बारे में ईमानदार रहें।
- यदि आपके पास सत्यापित जानकारी नहीं है तो विभिन्न कोविड-19 टीकों की प्रभावकारिता और सुरक्षा के बारे में बातचीत में शामिल न हों। गलत सूचना और मिथकों को बढ़ावा देने वाली बातचीत से दूर रहें। लोगों को गलत सूचना के खतरों के बारे में विनम्रता से बताना भी उचित है।

● किसी विशेष टीके के बारे में शेखी न बघारें जो आपने यह दावा करके लिया है कि यह बाकी की तुलना में बेहतर गुणवत्ता का है। सोचें कि सभी टीके कोविड-19 के गंभीर संक्रमणों से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

यात्रा का शिष्टाचार:

- यात्रा के दौरान अपना मास्क ठीक से पहनें। साथ ही, आप किसी सह-यात्री को विनम्रतापूर्वक मास्क पहनने के लिए कह सकते हैं यदि उन्होंने पहले से मास्क नहीं पहना है।
- फोटो क्लिक करने के लिए सार्वजनिक स्थानों पर अपना मास्क न हटाएं।
- उन स्थानों की यात्रा करने के लिए, जहां यह अनिवार्य है, पूरी तरह से टीकाकरण के अनधिकृत प्रमाण पत्र प्राप्त करने के प्रयास में शामिल न हों।

कार्यालय के लिए शिष्टाचार:

- अंतराल के सीमांकन का पालन करें और कम से कम 6 फीट की शारीरिक दूरी बनाए रखें।
- काम पर आने पर अपने हाथ साबून से अवश्य धोएं और जितना हो सके अपने चेहरे या मास्क को छूने से बचें।
- जहां तक संभव हो, नियत कार्य क्षेत्रों के बाहर आवाजाही को सीमित करने का प्रयास करें।
- बटन, कंट्रोल पैनल आदि दबाने के लिए कोई वस्तु (जैसे पेन) अवश्य रखें।
- मुखौटों के कारण संचार प्रतिबंधों पर विचार करें, विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो सुनने में अक्षम हैं या जो होंठ पढ़ने पर भरोसा करते हैं। यदि आवश्यक हो तो हाथ के इशारों का प्रयोग करें।
- जब भी संभव हो लिफ्टों के प्रयोग से बचें। यदि आवश्यक हो, तो पहले से ही भरी हुई जगह में कदम न रखें। उचित शारीरिक दूरी सुनिश्चित करने के लिए लोगों की संख्या कम होने की प्रतीक्षा करें। काम से पहले और बाद में व्यक्तिगत कार्यस्थानों को साफ करें। प्रत्येक उपयोग के बाद साझा स्थान साफ करें।
- अगर आपमें कोविड-19 के लक्षण दिखाई दे रहे हैं तो ऑफिस न जाएं। इसके अलावा, अपने प्रबंधक को सूचित करें।
- खाद्य सामग्री साझा न करें। टीम/ग्रुप लंच करने से बचें।
- व्यक्तिगत सामान जैसे फोन चार्जर, स्टेशनरी, मेकअप एक्सेसरीज आदि को साझा न करें। यदि आपको वास्तव में साझा करना है, तो उपयोग करने से पहले और बाद में वस्तुओं को साफ करना सुनिश्चित करें।

सत्यजीत राय की जन्म शताब्दी वर्ष पर विशेष

सत्यजीत राय - एक अध्ययन

(2 मई 1921- अप्रैल 1992)

जन्म एवं शिक्षा-दीक्षा

कला, साहित्य और संगीत के लिए विख्यात शहर कोलकाता के एक सुसंस्कृत एवं सुरुचिपूर्ण परिवार में जन्म हुआ श्री सत्यजीत राय का, जिन्हें 20वीं शताब्दी के सफल और प्रसिद्ध निर्देशक के रूप में न केवल अपने देश भारत, बल्कि बर्लिन, हॉलीवुड और पेरिस के फिल्म जगत में भी भरपूर ख्याति और सम्मान मिला है। श्री सत्यजीत राय के पिता स्वयं कला एवं साहित्य की दुनिया में एक जाने-माने नाम थे किंतु बचपन में ही पिता के निधन हो जाने के कारण श्री सत्यजीत राय के लालन-पालन में माता का विशेष प्रभाव रहा, कहीं-न-कहीं उनकी फिल्मों में महिला पात्रों के चित्रण में इसकी स्पष्ट झलक मिलती है। इनकी शिक्षा-दीक्षा प्रेसीडेंसी और विश्व भारती शांति निकेतन में हुई।

जीवनवृत्त : बहुमुखी प्रतिभा के धनी सत्यजीत राय केवल फिल्म निर्देशन ही नहीं, बल्कि पटकथा, वृत्ति चित्र (Documentary) निर्माता, लेखक, गीतकार, संपादक (पत्रिका), संगीतज्ञ, इलस्ट्रेटर और कैलीग्राफर (Calligrapher) में भी पूरी जानकारी और दखल रखते थे। दुनियाभर में एक बेहतरीन फिल्मकार के रूप में प्रतिष्ठित श्री राय ने अपने कैरियर की शुरुआत ग्राफिक डिजाइनर के तौर पर की थी।

सिनेमा जगत में पदार्पण

ग्राफिक डिजाइनिंग में उनका मन नहीं लग रहा था और उनका रुझान उन्हें किसी और तरफ खींच रहा था। इसी बीच इन्होंने लन्दन की यात्रा की। यहीं एक फ्रेंच फिल्म निर्माता ज्यां रेनो (Jean Renoir) से उनकी मुलाकात और इटली के Vitorio वश Sica की फिल्म लाद्री दी बिस्विलेत (बाईसाइकिल चोर) देखने के बाद श्री राय का रुझान फिल्म निर्माण की ओर हुआ। इनकी पहली फिल्म थी 'पथेर पांचाली' (1955) पश्चिम बंगाल के ग्रामीण परिवेश, समसामयिक सामाजिक जन-जीवन का आईना, इस फिल्म की पटकथा, पात्रों का चयन, संपादन की परिकल्पना पूरी की पूरी इन्हीं की थी। विभूति भूषण बंद्योपाध्याय की कहानी पर आधारित इस फिल्म में संगीत दिया था मशहूर संगीत सितार वादक रवि शंकर ने। ग्राम्य परिवेश, गरीबी, शिक्षा का अभाव और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद स्थितिजन्य हालातों का बड़ा सजीव चित्रण मिलता है

श्री राय की इस फिल्म में। कहते हैं कि इस फिल्म को कोई प्रोड्यूसर नहीं मिल पाने के कारण पश्चिम बंगाल सरकार ने प्रोडक्शन का भार लिया। 1952 में शुरू हुई इस फिल्म को अगस्त 1955 में रिलीज किया गया। वर्ष 1956 में केन्स (Cannes) फिल्म फेस्टिवल में सिर्फ इसे Best human documented film का खिताब (BAFTA) मिला। इसके अलावा कुल 11 अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार जीते इस फिल्म ने। फिल्म के किरदार 'अपू' को केन्द्र में रख राय ने तीन सीरीज (Tricology) बनाई - 'अपोराजितो' और ओपूर संसार।

नारी चरित्र-चित्रण : "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः" हमारे वेदवाणी के इस श्लोक के तर्ज पर, सत्यजीत राय की फिल्मों में नारी चरित्र को अति संवेदनशील रूप में उकेरा गया। उस कालखंड के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक विचारधारा और स्वतंत्र व्यक्तित्व से परिपूर्ण दिखती हैं उनकी नायिकाएं। ग्रामीण परिवेश आधारित फिल्मों में सत्यजीत राय की अभिनेत्रियों को स्वयं निर्णय लेने की क्षमता और मुखरता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है - उदाहरण - कंचनजंघा की नायिका द्वारा स्वयं जीवन-साथी चुनने का साहस, 'अपूर संसार' में शर्मिला की माता द्वारा पागल वर से बेटी का विवाह न होने देने की घोषणा। चारुलता की



नायिका शिक्षित है, अपनी लेखनी पत्रिका में प्रकाशित भी करवाती है किंतु पति की उदासीनता उसे इतना खिन्न कर देती है कि वह अन्य पुरुष के प्रति अपना प्रेम उजागर करने में हिचकती नहीं। केवल अपने पति के 'नाम' से जाने जानी वाली नहीं, बल्कि अपने दम-खम पर एक अपना व्यक्तित्व आंकने में सक्षम नज़र आती है, 'कापुरुष' की नायिका।

जनमानस के हर वर्ग को ध्यान में रख कर बनाई गई फिल्में : श्री सत्यजीत राय के समय 70 के दशक में नक्सलवादी क्रांति जोर पकड़ रही थी। इस दौरान नवयुवकों की मानसिकता को दर्शाते हुए उन्होंने 03 फिल्में बनाई - 'प्रतिद्वन्दी', 'सीमाबद्ध' और 'जन अरण्य'। पात्रों की विवशता और बेचारगी का बड़ा सजीव चित्रण मिलता है इनकी फिल्मों में। बच्चों के लिए 'सोना के लला', 'हीरक राजार देशे', 'गुपी गाइन बाघा बाइन' अभी तक उतनी ही लोकप्रिय हैं, जितनी तब थीं। बंगाल के महानायक उत्तम कुमार की अंग्रेजीदां और परिष्कृत छवि पेश करती है, सत्यजीत राय की फिल्म 'नायक'। एक अन्य Genre की फिल्म है, 'आगंतुक', जिसमें स्व. उत्पल दत्त ने बेहतरीन अभिनय से दर्शकों का दिल जीत लिया था।

फिल्मों की वेश-भूषा का चित्रण : यूँ तो श्री राय बांग्ला भाषा में ही फिल्मों के निर्माण के लिए जाने जाते हैं किंतु कुछ हिंदी फिल्मों जो उन्होंने बनाई, ने भी एक अलग ही छाप छोड़ी दर्शकों के मानस पटल पर। उनमें से एक बहुचर्चित फिल्म 'शतरंज के खिलाड़ी' में संजीव कुमार और अमजद खान के वेश-भूषा में समसामयिकता का पुट मिलने के अलावा शबाना आजमी और फरीदा जलाल के आभूषण सबकी नज़र का आकर्षण बने। वहीदा रहमान की चांदी की हंसुली (ओभिजान) और सिमी ग्रेवाल द्वारा पहनी गई चंकी ज्वेलरी उस महिला पात्र के लिए "परफेक्ट फिट" थी (अरन्येर दिन रात्रि)। "कंचनजंघा" की नायिका का वेश, साड़ी और ट्रेच कोट, ठंड के मौसम में अभी तक युवतियों की पहली पसंद है। फैशन डिजाइनरों द्वारा किए गए नवीनतम शोध में यह तथ्य सामने आया है कि श्री राय की एक स्केच बुक थी, जिसमें वे अपने सिनेमा के पात्रों के 'लुक' को स्केच करते थे। पात्रों के वेश-भूषा, गहने, मेकअप और चरित्र की सूक्ष्म भाव-भंगिमा भी मानो फिल्मकार के ज़ेहन में बिल्कुल स्पष्ट थी। यही पहचान है एक सुलझे हुए निर्देशक की। ग्राम्य परिवेश और शहरी वातावरण, दोनों ही पृष्ठभूमियों पर आधारित सिनेमा में पूरी महारथ हासिल थी इस फिल्मकार को। इनकी संवेदनशील फिल्मों में संगीत विश्वाविख्यात सितारवादक पंडित रविशंकर ने दिया।



सत्यजीत राय के वे विचार जिनपर वे फिल्म नहीं बना पाए

सत्यजीत राय को उनकी सिनेमाई रचनाओं के लिए सार्वभौमिक रूप से सराहा जाता है। हालाँकि, उनके मन को समझने के लिए उनके साहित्यिक आवधारणाओं पर विचार करना सार्थक हो सकता है जिन्हें वे सेल्युलोइड पर उतार नहीं सके। उनमें से कुछ सुप्रसिद्ध हैं- द एलियन, ए पैसेज टू इंडिया और द महाभारत। लेकिन कई और भी विषय थे जिनके बारे में केवल राय के प्रशंसक ही जानते थे। सौभाग्य से सत्यजीत राय और उनके पुत्र संदीप के निबंध और पत्र; मैरी सेटन (पोर्ट्रेट ऑफ ए डायरेक्टर, 1971) और एंड्रयू रॉबिन्सन (सत्यजीत राय: द इनर आई, 1989), सुरेश जिंदल की 'माई एडवेंचर्स विद सत्यजीत राय-द मेकिंग ऑफ शतरंज के खिलाड़ी (2017), नसरीन मुन्नी कबीर का वहीदा रहमान से वार्तालाप (2014) और बांग्लादेशी फोटो पत्रकार अमानुल हक के लेख इस विषय पर कुछ प्रकाश डालते हैं।

पश्चिमी देशों में भारत की छवि

'ए पैसेज टू इंडिया' को फिल्माने के इरादे से राय ने 1966 में कैम्ब्रिज में ई.एम. फोर्स्टर से मुलाकात की। राय को उद्धृत करते हुए रॉबिन्सन कहते हैं लेकिन उन्हें मेरा नाम ज्ञात था, वे अधिकांश समय तक अपना सिर हिलाते रहे, जिसका मतलब था कि वे नहीं चाहते थे कि पुस्तक पर फिल्म बने। बाद में, फोर्स्टर की मृत्यु के काफी बाद 1980 में किंग्स कॉलेज के ट्रस्टियों ने राय से संपर्क किया लेकिन तब तक उन्हें इस विषय पर कोई रुचि नहीं रह गई थी। डेविड लीन्स का संस्करण (1984), जाहिर तौर पर राय को संतुष्ट नहीं कर सका- '.. सारी चीजें अत्यंत चित्रमय है.. पैंगी एशक्रॉफ्ट्स की अदाकारी के बावजूद मेरे लिए कोई भी पात्र जीवंत महसूस नहीं होता।

एक प्रसिद्ध निबंध अंडर वेस्टर्न आईज (साईट एंड साउंड, ऑटम 1982) में राय ने भारत के प्रति पश्चिमी देशों की



दिलचस्पी की सीमाओं का उल्लेख किया था और कैसे इसके विचार अक्सर विकृत और असत्य थे तथा हरी जसमीत राम सिंह के अनुसार कभी-कभी ये अजीब रूढ़िवादिता' से ग्रस्त नजर आते थे। वे अपनी बातें समाप्त करते हुए लिखते हैं इतने लंबे समय से उपेक्षित भारत इतनी आसानी से पश्चिमी देशों को अपना रहस्य प्रदान नहीं करेगा। यह अफ़सोस की बात है कि 'ए पैसेज टू इंडिया' को राय द्वारा फिल्माया नहीं जा सका।

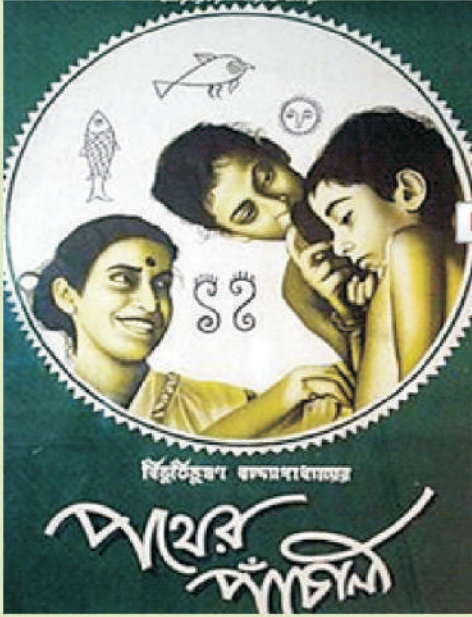
महाभारत ने श्री राय को बचपन से ही आकर्षित किया था। पचास के दशक के उत्तरार्ध से वह इसे फिल्माने की योजना बना रहे थे। लेकिन किस भाषा में? गैर-भारतीय दर्शकों के लिए मुख्य पात्रों को भी कैसे पेश किया जाए? एक समय में उनका इरादा दिलीप कुमार, तोशीरो मिफ्यून और अन्य को कास्ट करने का था। राय को डाइस गेमपार्ट (घूत) में दिलचस्पी थी। युद्ध से अधिक यह उन पात्रों के बीच व्यक्तिगत संबंधों की खोज थी जो उन्हें सिनेमाई रूप से आकर्षित करते थे। एक बार परिहास में उन्होंने जिंदल से कहा था मैंने हार मान ली, क्योंकि मैं कल्पना नहीं कर सकता था कि किर्क डगलस अर्जुन की भूमिका निभा रहे हैं।

राय के ओभिजान (1962) में अभिनय करने वाली वहीदा रहमान ने कहा कि राय आर.के. नारायणन की 'द गाइड' पर फिल्म बनाना चाहते थे और नायिका की भूमिका के लिए उन्होंने वहीदा रहमान से संपर्क किया था। वे कहती हैं कि राय के निर्देशन में यह

फिल्म पूरी तरह से अलग होती। परंतु तब शायद बॉलीवुड ब्लॉकबस्टर के रूप में विख्यात 'गाइड' फिल्म का यह अवतार हमें देखने को नहीं मिलता।

'अन्य सत्यजीत (1998) में संदीप राय कहते हैं कि किसी समय मैं राय के मस्तिष्क में कई बंगाली फिल्मों के विचार थे। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय की राजसिंहा (बलराज साहनी के साथ) और देवी चौधुरानी (सुचित्रा सेन के साथ), शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की महेश, विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय की दरबारमयीर, काशीवास और इच्छामती, माणिक बंद्योपाध्याय की 'पद्मा नोदिर मांझी', महाश्वेता देवी की 'विचान', बुद्धदेव बोस की 'एकटी जीवन', प्रफुल राय का 'राम चरित्र', शिवराम चक्रवर्ती का 'देवोतर जोन्मोँध', बनफूल का 'किछुकशान', बांग्लादेशी लेखक शाहिद अली की 'जिवरेलेटर दाना' और सेलिना हुसैन की 'हंगोर नोदी ग्रेनेड'। किंतु अभिनेता/अभिनेत्रियों की अनुपलब्धता के कारण (उदाहरण के लिए चुन्नीबाला देवी और सुचित्रा सेन) एवं कुछ अन्य अड़चनों के कारण इन्हें परदे पर उतारा जाना संभव नहीं हो सका। इन विचारों को विभिन्न चरणों में छोड़ना पड़ा। संदीप के अनुसार उनके पिता इस बात की परवाह किए बिना कि इसे पूरा नहीं किया जा सकता, वे अपने काम के साथ आगे बढ़ते रहे।

स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने पंडित जवाहरलाल नेहरू पर एक वृत्तचित्र बनाने के लिए राय से संपर्क किया था। इसके अलावा? जून, 1978 को लिखे एक पत्र में राय ने जिंदल को उन प्रस्तावों के बारे में बताया जिनपर विचार करने के लिए उनसे अनुरोध किया गया था... (क) फ्रेंच टीवी के लिए राजस्थानी संगीत पर वृत्तचित्र (ख) बीबीसी के लिए मेरी पसंद के किसी भी विषय या विषयों पर ३ भाग में एक फिल्म (प्रत्येक १० मिनट लंबी)... (ग) यूएनओ के लिए विश्वव्यापी टीवी स्क्रीनिंग हेतु 'युद्ध की भयावहता और कष्टों' पर एक फिल्म बनाने का प्रस्ताव... (घ) अद्यतन स्क्रिप्ट (संवाद) और नये शीर्षक के साथ एक बड़ी अमेरिकी कंपनी के बैनर तले 'द एलियन' का पुनर्निर्माण..'. (कहते हैं 'दि एलियन' फिल्म की पूरी पटकथा श्री सत्यजीत राय द्वारा लिखी एवं विकसित की गई थी। ई.टी. पात्र की परिकल्पना पूरी तरह इन्हीं के दिमाग की उपज थी, यह और बात है कि फिल्म बन जाने के बाद और सत्यजीत राय को पता चलने के बाद भी उन्होंने फिल्म के निर्देशक पर रॉयल्टी या प्लेजरिज्म (Plagiarism) का कोई मुकदमा नहीं दायर किया न ही मीडिया के समक्ष उन्होंने इस सत्य



को उजागर किया कि इस फिल्म का पूरा श्रेय किसी और ने लिया और श्री राय को कहीं उद्धृत नहीं किया गया। यूनिसेफ ने बाल मजदूरी पर एक फिल्म बनाने के लिए उनसे संपर्क किया था। श्री राय बाल्मीकि-

प्रतिभा और राधानाथ सिकंदर, जिन्होंने सबसे पहले दुनिया की सबसे ऊंची पर्वत चोटी की गणना की, जैसे विख्यात लोगों के जीवन पर वृत्तचित्र निर्माण में भी रुचि थी। परंतु अंततः इनमें से कोई भी कल्पना सेल्यूलॉयड पर नहीं उतर सकी जिसका कारण सार्वजनिक रूप से ज्ञात नहीं है।

सत्यजीत राय के पसंदीदा नायक स्वर्गीय सौमित्र चटर्जी उनकी फिल्मों के संदर्भ में कहते हैं उनकी फिल्में मानवीय संवेदनाएं एवं अनुभूतियों में रची बसी किसी कविता की लय में चित्रित जान पड़ती है। फिल्मों के किरदार आपको अपने आस-पास के चरित्रों में से एक लगते हैं

राय को महान केवल फिल्मों का उनका जुनून नहीं बनाता बल्कि फिल्म की कहानी की उनकी समझ, उसे उसी संवेदनशीलता के साथ फिल्मों की कला और उस विषय के अनुरूप हर पहलू का ट्रीटमेंट उन्हें महान बनाता है। पहली फिल्म 'पथर पंचाली' रिलीज होते ही अंतरराष्ट्रीय फिल्म जगत में चर्चा का विषय बन कर उभरी। इस फिल्म में सत्यजीत राय के पात्र, कहानी और जिस इमानदारी से कहानी के तत्व और सत्व को पर्दे पर जीवंत किया, वह अद्भुत है। इस फिल्म का निर्माण सेट बनाकर नहीं बल्कि रियल लाइफ लोकेशन पर शूटिंग करके की गई। बांग्ला (भारत की प्रांतीय भाषा) की एक फिल्म 'पथर पंचाली' सत्यजीत राय की पहली फिल्म होने के बावजूद रिलीज होते ही 'ब्रिटिश एकेडमी फिल्म अवार्ड' में दिखाई जाती है और इसे उस वर्ष (1958) के लिए BAFTA का पुरस्कार दिया जाता है। यह अपने

आप में ना केवल सत्यजीत राय के लिए बल्कि भारत के लिए भी बेजोड़ उपलब्धि रही। एक और फिल्म 'अपोराजितो' को भी बेस्ट फिल्म के तौर पर वर्ष-1959 के BAFTA अवार्ड से नवाजा गया। बांग्ला फिल्म जगत में अपोरोजितो एक cult film के रूप में सराही गई। 'अपूर संसार' BAFTA के नोमिनेशन में ही अपनी जगह बना पाई, कोई पुरस्कार नहीं मिल पाया।

वर्ष-2021 को श्री सत्यजीत राय के जन्मशती वर्ष (Centenary Year) के रूप में मनाया जा रहा है। इस अवसर पर भारत मां के इस सपूत के नाम दर्ज पुरस्कारों की रूपरेखा :

पुरस्कार : कुल 32 राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार

- 1958 - पद्मश्री - भारत सरकार
- 1965 - पद्मभूषण - भारत सरकार
- 1973 - डॉ० ऑफ लैटर्स - दिल्ली विश्वविद्यालय
- 1974 - डी. लिट - रॉयल कॉलेज ऑफ आर्ट्स, लंदन
- 1976 - पद्मविभूषण - भारत सरकार
- 1978 - डी. लिट - आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय
- 1978 - विशेष पुरस्कार - बर्लिन फिल्म समारोह
- 1979 - विशेष पुरस्कार - मास्को फिल्म समारोह
- 1981 - डाक्टरेट बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (बीएचयू)
- 1982 - गोल्डेल लॉयन - वेनिस फिल्म समारोह
- 1985 - दादा साहब फाल्के पुरस्कार - भारत सरकार
- 1992 - ऑस्कर for lifetime achievement
- 1992 - भारतरत्न - भारत सरकार

इसके अलावा भारत एवं विदेश की कई विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी. लिट की उपाधि दी। 1992 में अस्पताल में शैय्यासीन राय को Lifetime achievement 'Oscar' प्रदान किया गया। 23 अप्रैल, 1992 को इस सदी के महानतम फिल्मकार ने कोलकाता में अंतिम सांस ली। उन्हें श्रद्धांजलि स्वरूप पश्चिम बंगाल सरकार ने टॉलीगंज में 'सत्यजीत राय फिल्म इंस्टीट्यूट' के नाम से एक फिल्म एवं थियेटर से जुड़े एक संस्थान की स्थापना की। इनके निधन के बाद बांग्ला एवं हिंदी फिल्म जगत के एक सुनहरे अध्याय का अंत हो गया। वर्ष 2021 को उनकी याद में उनके फिल्मों का प्रदर्शन कर और उनके जीवनवृत्त पर विचार विमर्श एवं अन्य फिल्म संबंधी कार्यक्रमों को आयोजित किया जा रहा है। सदी के इस महान निर्देशक को नमन।

किरण बोस

राजभाषा अधिकारी,
मेट्रो रेलवे, कोलकाता

मेट्रो चेतना

राजभाषा की गतिविधियाँ - राजभाषा पखवाड़ा (1 से 14 सितम्बर 2021)



अमृत महोत्सव एवं राजभाषा पुरस्कार वितरण के अवसर पर महाप्रबंधक श्री मनोज जोशी एवं अपर महाप्रबंधक श्री शरद कुमार श्रीवास्तव दीप प्रज्वलित करते हुए।

राजभाषा पुरस्कार वितरण



मेट्रो रेलवे, कोलकाता

मेट्रो समाचार

राजभाषा की गतिविधियाँ (1 सितंबर से 14 सितंबर 2021)



राजभाषा विभाग/मेट्रो रेलवे द्वारा भारत के स्वतंत्रता संग्राम में लेखकों के योगदान पर आजादी का अमृत महोत्सव (14.09.2021)

कोलकाता 10 सितंबर, 2021 : मेट्रो रेलवे, कोलकाता में 01.09.2021 से 14.09.2021 तक राजभाषा पखवाड़ा का आयोजन किया गया है। इस दौरान सरकारी कार्यों में राजभाषा को प्रोत्साहित और प्रेरित करने के उद्देश्य से अधिकारियों व कर्मचारियों के लिए हिंदी निबंध प्रतियोगिता, टिप्पण और प्रारूप लेखन, वाक् प्रतियोगिता, हिंदी प्रश्नमंच जैसी प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं। इसी क्रम में राजभाषा विभाग और जनसंपर्क विभाग द्वारा संयुक्त रूप से दिनांक 09.09.2021 को आजादी का अमृत महोत्सव का आयोजन किया गया। कार्यक्रम के दौरान स्वतंत्रता सेनानी लाल-बाल-पाल (लाला लाजपत राय, बाल गंगाधर तिलक, विपिन चंद्र पाल) के जीवन पर बनी एक वृत्त चित्र का प्रदर्शन किया गया। महोत्सव में उपस्थित कर्मियों को संबोधित करते हुए महाप्रबंधक श्री मनोज जोशी ने बताया कि स्वतंत्रता संग्राम के वीर सेनानियों के गौरव को सहेजने और उनसे प्रेरणा लेने के लिए मेट्रो रेलवे में आयोजित यह कार्यक्रम सराहनीय है। इस कार्यक्रम में मेट्रो के प्रधान विभागाध्यक्ष, अधिकारी एवं कर्मचारी उपस्थित थे। कार्यक्रम की अगली कड़ी में स्वतंत्रता संग्राम और राजभाषा पर आधारित प्रश्नोत्तरी (क्विज) प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें उपस्थित सभी अधिकारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।



वाक् प्रतियोगिता



निबंध तथा टिप्पण एवं
प्रारूप लेखन प्रतियोगिता

बिदाई समारोह



श्री अशोक कुमार पाण्डेय वरिष्ठ अनु अधिकारी को स्मृति चिन्ह से सम्मानित करते हुए अपर महाप्रबंधक एवं मुराधि, उप मुराधि, राधि एवं सहकर्मिवृंद।

मेट्रो रेलवे, कोलकाता

हिन्दी के हस्ताक्षर

अब दिन बदले, घड़ियाँ बदलीं,
साजन आए, सावन आया।

धरती की जलती साँसों ने
मेरी साँसों में ताप भरा,
धरती की छाती दरकी तो
कर घाव गई मुझपर गहरा,
है नियति-प्रकृति की ऋतुओं में
संबंध कहीं कुछ अनजाना,
अब दिन बदले, घड़ियाँ बदलीं,
साजन आए, सावन आया।

तुफान उठा जब अंबर में
अंतर किसने झकझोर दिया,
मन के सौ बंद कपाटों को
क्षण भर के अंदर खोल दिया,
झोंका जब आया मधुवन में
प्रिय का संदेश लिए आया-
ऐसी निकली ही धूप नहीं
जो साथ नहीं लाई छाया।
अब दिन बदले, घड़ियाँ बदलीं,
साजन आए, सावन आया।
साजन आए, सावन आया:

घन के आँगन से बिजली ने
जब नयनों से संकेत किया,
मेरी बे-होश-हवास पड़ी
आशा ने फिर से चेत किया,
मुरझाती लतिका पर कोई
जैसे पानी के छींटे दे,
ओ' फिर जीवन की साँसें ले
उसकी प्रियमाण-जली काया।
अब दिन बदले, घड़ियाँ बदलीं,
साजन आए, सावन आया।

रोमांच हुआ जब अवनी का
रोमांचित मेरे अंग हुए,
जैसे जादू की लकड़ी से
कोई दोनों को संग छुए,
सिंचित-सा कंठ पपीहे का
कोयल की बोली भीगी-सी,
रस-डूबा, स्वर में उतराया
यह गीत नया मैंने गाया
अब दिन बदले, घड़ियाँ बदलीं,
साजन आए, सावन आया।

हरिवंश राय बच्चन



जन्म	27 नवम्बर 1907 प्रतापगढ़, आगरा, ब्रितानी भारत (अब उत्तर प्रदेश, भारत)
मृत्यु	18 जनवरी 2003 मुम्बई, महाराष्ट्र, भारत
व्यवसाय	कवि, लेखक, प्राध्यापक
भाषा	अवधी, हिन्दी
राष्ट्रीयता	भारतीय
उच्च शिक्षा	इलाहाबाद विश्वविद्यालय सेन्ट कैथेराइन कॉलेज, कैम्ब्रिज उल्लेखनीय सम्मान पद्मभूषण (1976 में)
जीवनसाथी	श्यामा (1926-1936) तेजी बच्चन (1941-2007)

मेट्रो चेतना

65वां एवं 66वां रेलवे सप्ताह समारोह

महाप्रबंधक श्री मनोज जोशी के करकमलो से पुरस्कार ग्रहण करते हुए मेट्रो रेल कर्मी



मेट्रो रेलवे, कोलकाता